thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य वन्दना

ओ३म्

मूल्य ९ रूपये

हिमाचल प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा का मुख पत्र

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती

महर्षि दयानन्द अमृत वचन

श्री महाराज का माहात्मय शुद्रों का उद्धार है। भील, कोल और पैरिहा आदि लाखों मनुष्य आर्यों में अछूत समझे जाते हैं। ऐसे कुलीनजन भारत में पाये जाते हैं, जो इनकी छाया भी अपने शरीर में नहीं पड़ने देते। ऐसे कुत्सित व्यवहार से जो हानियाँ हो रही हैं, उन्हें सभी जानते हैं। श्री स्वामीजी ने सर्व प्रकार के शूद्रों को आर्यजाति का अंग वर्णन किया है। उन्होंने अपने नूतन संस्कार में इस भारी भूल को, घृणित भेद–भावना को और तुच्छाभिमान को निकाल ड़ाला है। अस्पृश्य का विचार उठा दिया है, आर्यधर्म में जब से आचार्य चक्र चला है, सम्प्रदायों की जब से स्थापना हुई है और जब से समाज संशोधक सन्तजन उत्पन्न होते आये हैं, तब से यह अनुपम पदवी एक स्वामी दयानन्दजी को ही प्राप्त हुई है कि उन्होंने दूसरे धर्मों और जातियों के जनों के लिए वेद मर्यादा से आर्यधर्म का द्वार खोल दिया। अब चाहे जो आर्यधर्म में प्रवेश करे, उसके मार्ग में प्रतिबन्धात्मक बात कोई भी नहीं है। इतिहास–माला में यह माहात्मय सदा सम्मान से स्मरण किया जाएगा।

–श्रीमद्दयानन्द प्रकाश

सुप्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी एवं आर्य समाज बिलासपुर के संस्थापक श्री धर्मदास जी आर्य अपनी पत्नी श्रीमती सरला दास के साथ।

आर्यजन

वे आर्य ही थे जो कभी अपने लिये जीते ना थे,
वे स्वार्थरत हो मोह की मदिरा कभी पीते ना थे।
अपने लिये वे दूसरों का हित कभी हरते न थे,
चिन्ता प्रपूर्ण अशान्ति पूर्वक वे कभी मरते न थे।

उनके आलौकिक दर्शनों से दूर होता ताप था,
अति पुण्य मिलता था तथा मिटता हृदय का ताप था,
उपदेश उनके शान्तिकारक थे निवारक शोक के।
सब लोक उनका भक्त था, वे थे हितैषी लोक के।

-गुप्त जी

यह अंक आर्य समाज बिलासपुर के सौजन्य से प्रकाशित किया गया तथा आगामी अंक आर्य समाज सोलन के सौजन्य से प्रकाशित किया जाएगा।

अंक : ६२वां विक्रमी सम्वत् २०७२ सृष्टि सम्वत् १९६०८५३११६ अप्रैल २०१५

thearyasamaj.org

प्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी एवं दृढ़ आर्य श्री धर्मदास जी आर्य

•स्वामी सुमेधानन्द, दयानन्द मठ चम्बा

वयोवृद्ध श्री धर्मदास जी आर्य आज हमारे बीच नहीं रहे। जिस प्रकार उनके पुत्रों को उनके दिवंगत होने की बात गले नहीं उतर रही है उसी प्रकार व्यक्तिगत रूप से मुझे भी उनका स्नेह एवं साथ ही आदर भाव भी इतना अधिक मिला कि उनका हमारे बीच से चले जाना दुःखदाई लग रहा है। उनकी धर्मपत्नी पूज्या धर्मात्मा माता श्रीमती सरला देवी जी भी इतनी पतिपरायण एवं सरल स्वभाव की थी कि उनके दिवंगत होने से स्व. श्री धर्मदास जी टूट से गए थे। उन्होंने एक दिन मुझे कहा था कि सरला का जाना बड़ा दुखदाई रहा। उससे मैं सुख–दुख की आपसी चर्चा कर लेता था। अब वह सारी बातें मन में ही दबी रह जाती हैं।

श्री धर्मदास जी आर्य ने प्रजामण्डल के माध्यम से राष्ट्र की स्वतंत्रता की लड़ाई में महत्वपूर्ण योगदान दिया था। वह निर्भीक थे। कभी किसी से भयभीत नहीं होते थे। जो बोलना या करना था निर्भय हो कर करते थे। राजनैतिक महत्वाकांक्षा उनमें नहीं थी, होती तो बिलासपुर में कांग्रेस के प्रसिद्ध नेता होते। श्री लाला धर्मदास जी में साहस व कर्त्तव्यपरायणता तथा मजबूत इच्छा शक्ति कूट–कूट कर भरी थी। यही कारण था कि उन्होंने बिलासपुर में आर्य समाज का भव्य भवन खड़ा करके दिखा दिया। आज बिलासपुर आर्य समाज के तत्वावधान में एक बहुत उत्तम विद्यालय भी चल रहा है। आर्य समाज व विद्यालय उनके स्मारक हैं और देर तक उनकी याद दिलाते रहेंगे। मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि विद्यालय के जो बोर्ड बनें हैं उनमें संस्थापक–"लाला धर्मदास आर्य" ऐसा मोटे मोटे अक्षरों में लिखा जाए।

श्री धर्मदास जी के सुपुत्रों श्री जगदीश जी, श्री राजू जी, श्री यशपाल जी, श्री सुरेन्द्र पाल बब्बल, एवं श्री दिनेश पाल जी मुन्ना से मेरा आग्रह है कि आप लोगों के दिवंगत पूज्य पिता के प्रति सबसे अच्छी श्रद्धांजलि यही होगी कि आप पूरी शक्ति से आर्य समाज एवं विद्यालय के कार्य को बढ़ाए। आर्य समाज की ज्योति को जलाने में उन्होंने अनथक परिश्रम किया था। कृपया आप लोग स्व० पूज्य पिता श्री धर्मदास जी द्वारा प्रज्वलित धर्म की ज्योति को बुझने न देना, यदि मुझे ऐसा लगा कि आर्य समाज का कार्य शिथिल हो रहा है और कहने पर भी आप लोग उदासीन बन रहे हैं तो मैं आपके घर आना बंद कर दूंगा। यदि आपने धर्म का प्रचार करने में पूरी शक्ति लगाई तथा श्री धर्मदास जी की कीर्ति को बनाए रखा तो मेरा प्यार आशीर्वाद व सहयोग सदैव आपके साथ रहेगा। यह संन्यासी का वचन है।

योग्य पुत्र व योग्य शिष्य अपने पिता एवं गुरू के आदेश का पालन करने में ही अपना जीवन सफल मानतें हैं। मंगलमय प्रभु आप पुत्रों को ऐसी शक्ति दे जिससे उस महान् आत्मा का यश चिरकाल तक बना रहे। यही उनके प्रति आपकी व हम सबकी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

मुख्य संरक्षक	: स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती जी महाराज, दयानन्द मठ, चम्बा मोबाइल : 94180–12871
संरक्षक	: रोशन लाल बहल, आर्य प्रतिनिधि सभा, हि. प्र., मोबाइल : 94180–71247
मुख्य परामर्शदाता	: सत्य प्रकाश मेहंदीरत्ता, संरक्षक एवं विशेष सलाहकार, आर्य प्रतिनिधि सभा, हि. प्र. फोन : 090348–17118, 094669–55433, 01733–220260
परामर्शदाता	: 1. रत्न लाल वैद्य, आर्य समाज मण्डी, हि. प्र. मोबाइल : 94184–60332 2. सत्यपाल भटनागर, प्राचार्य, आर्य आदर्श विद्यालय, कुल्लू मोबाइल : 94591–05378
विधि सलाहकार	: प्रबोध चन्द सूद (एडवोकेट), प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, हि. प्र. मोबाइल : 94180–20633
सम्पादक	: कृष्ण चन्द आर्य, महर्षि दयानन्द मार्ग, आर्य समाज, सुन्दरनगर (खरीहड़ी), जिला मण्डी (हि. प्र.) पिन 175019 मोबाइल : 94182–79900
मुख्य प्रबन्ध–सम्पादक	: विनोद स्वरूप, कांगड़ा कालौनी, डा. कनैड, तह. सुन्दरनगर, जिला मण्डी (हि. प्र.) पिन 175019 मोबाइल : 94181–54988
प्रबन्ध–सम्पादक	: माया राम, गांव चुरढ़, सुन्दरनगर मोबाइल : 94184–71530
सह–सम्पादक	: 1. राजेन्द्र सूद, 106, ठाकुर भ्राता, लोअर बाजार, शिमला 2. मनसा राम चौहान, आर्य समाज, अखाड़ा बाजार, कुल्लू मोबाइल : 94599–92215
मुद्रक	: प्राईम प्रिंटिंग प्रैस, शहीद नरेश कुमार चौक, सुन्दर नगर, (हि. प्र.) 175019
नोट	: लेखकीय विचारों से सम्पादकीय व प्रकाशकीय सहमति आवश्यक नहीं है।

सम्पादक, मुद्रक एवं प्रकाशक कृष्ण चन्द आर्य ने हिमाचल आर्य प्रतिनिधि सभा के लिए छपवाकर आर्य समाज, महर्षि दयानन्द मार्ग, खरीहड़ी (सुन्दरनगर) से प्रकाशित किया।

thearyasamaj.org

सम्पादकीय

हमारे ऋषि–मुनियों का विश्व के बारे में "सर्वे भवन्तु सुखिनः" का चिन्तन रहा है अर्थात् उनके मन और मस्तिष्क में यही विचार रहता था कि विश्व में मानवता का उपकार और उद्धार होता रहे। कभी भी और किसी भी स्थिति में विश्व का अहित न होने पाये। हमारे ऋषि, मुनियों तथा चिन्तकों का यह चिन्तन रहा है कि धर्म और समृद्धि का साम्राज्य छाया रहे सभी के जीवन में सदा और सर्वदा आनन्द का साम्राज्य बना रहे और कोई भी किसी भी परिस्थिति में दुख और अशांति से आहत न होने पाये। जीवन निरोगी, सहज और सुख–समृद्धि से परिपूर्ण रहे। सभी प्राणियों को एक दूसरे के सुख–दुख में समभावी बनने की चाह बनी रहे। विकट से विकट परिस्थिति में भी अपने मनोबल को बनाये रखें तथा परम् पिता परमेश्वर की इस पुनीत सृष्टि रूपी काव्य को अवलोकित करते रहें। हमारे जीवन का मर्म, धर्म और कर्म दीन–दुखी–दलितों के आंसूओं को पोंछना होना चाहिए वहीं इस सृष्टि के रचियता परमेश्वर की सबसे बड़ी सेवा है। ईश्वर घंटियों और घडियाल बजाने के बजाय दीन–दुखियों की मन मन्दिर में निवास करता है। उसे जानना और पहचानना हमारा सबसे बड़ा जीवन का मर्म होना चाहिए। किसी कवि ने ईश्वर से प्रार्थना करते हुए ठीक ही कहा है कि :

मैं खोजता तुझे था जब कुंज और वन में,
तू ढूंढता मुझे था दीन के सदन में,
मैं आहवन किसी की तुझको पुकारता था
तू था मुझे बुलाता तब संगीत में, भजन में।

वेदों में लिखा है, देवस्य पश्य काव्यम् अर्थात् उस परम पिता परमेश्वर के सृष्टि रूपी काव्य को निहारते और अवलोकित करते रहो। इसमें वास्तविक स्वरूप के हम जीवन के समस्त कलाओं को समझ कर जीने का सच्चा सोच हमारे मन और मस्तिष्क में आता और समाता रहेगा। प्रभु कल्याणकारी हैं। वह सृष्टि के कण–कण में विद्यमान है। उसके रूप को जानना, मानना और पहचानना हमारा नैतिक कर्म है। तभी हम सभी उस दाता की दी हुई संताने हैं। फिर अनुचित और अस्वस्थ रूप से इस विश्व में अशांति और दुख के बीजों को आरोपित करने का क्या मतलब है ? उस प्रभु ने बार–बार ये कहा है 'मित्रस्य चक्षुसा षमीक्षामहे' अर्थात् हम सभी को मित्र और हितचन्तन के भाग से अवलोकित करते रहना चाहिए। कभी भी और किसी भी परिस्थिति में हमें अन्याय, अत्याचार और भ्रष्टाचार के आगे घुटनाटेक नीति नहीं अपनाना चाहिए अपितु उससे दो–दो हाथ करके मानवता का पथ प्रशस्त करते रहना चाहिए। मर्यादा पुरषोतम श्री राम ने कहा है 'जो न मित्रहित हुई दुखारी ताहि विलोकत पातक भारी' अर्थात् जो अपने सहयोगी के दुख–सुख में सहायक नहीं होता उसे देखने मात्र से मन और मस्तिष्क में दुख और अशांति की तरंगे जीवन के मधुमास को पतझड़ में परिवर्तित करती रहती हैं। संत शिरोमणि कबीर दास ने सच्चे–पक्के मनुष्य के सम्बंध में अपने विचार अभिव्यक्त करते हुए कहा है :

कबीरा सोहि पीर है जो जाने पर पीर,
जो पर पीर न जानहि वो काफिर वेपीर।

अर्थात् वही पहुंचा हुआ व्यक्ति है जो दूसरों की पीड़ा को आत्मसात करता है, जो दूसरों के दुख में सुख और शांति अनुभव करता है वो काफिर है और वेपैंदे लोटे के तरह आयुपर्यन्त लुढकता रहता है, वह रक्षक कम और भक्षक अधिक होते हैं, उनका कभी भी विश्वास नहीं किया जा सकता है। प्राचीन काल से लेकर आज दिन तक माताएं अपनी संतानों की हितकारी रही हैं। लेकिन ऐसी भी माताएं हैं जो समाचार पत्रों की सुर्खियों में छायी रहती हैं जिन्होंने चेलों के चक्कर में पड़कर अपनी संतानों का गला काट दिया और उसके खून को गटक कर पी लिया। भूत–प्रेत और निशाचर की संज्ञा ही ऐसी दुष्ट माताओं को दी जा सकती है जो चेलों के चक्कर में पड़कर अपने जीवन की हरियाली को भस्तसात कर बैठती हैं। एक माता की अपनी पांच वर्षीय पुत्री का गला चेलों के चक्कर में पड़कर रेत डाला क्योंकि सिद्धि प्राप्त होगी लेकिन उल्टे उसे आजीवन जेल की सींखचों के पीछे जाना पड़ा और अपने जीवन को बरबाद करना पड़ा। असली माता का चित्रण करते हुए कवि ने तो यहां तक कहा है

रंचक रोग होत रहि रहि दैव मनावे
खान–पान नींद तजि नहान जागत रैन बितावे
कहां जाऊं, कहां औषधि पाऊं सोचि सोचि अकुलावे
ऐसी नेहमयी माता सो पूर्ण कवहुं नहि होवे
उरमें मूर्ति खैंचि सदाहि, उस पद शीष नवाहिं।

अर्थात् अपने बालक और बालिका की तनिक सी बीमारी से शोक सागर में डूब जाती है और उसके समुचित ईलाज के प्रबन्ध हेतु कदम उठाती है। स्वाभाविक रूप से ऐसी माताओं के चरण कमल छूने और उनका आशीर्वाद लेना बच्चे के जीवन को सुखमयी और मंगलमयी बनाने में सहायक और श्रेष्ठ होता है। इसलिए हमारे धर्मशास्त्रों में लिखा है मातृ देवो भवः, पितृदेवो भवः, आचार्य देवो भवः अर्थात् हमें जीवन में आयु पर्यन्त अपने माता–पिता और गुरूजनों का आशीर्वाद लेते रहना चाहिए। उनकी सेवा में ही हमारे जीवन की सुख–शांति निवास करती है।

—कृष्ण चन्द आर्य

thearyasamaj.org

बिलासपुर के भीष्म पितामह ९८वे वर्षीय स्वतन्त्रता सेनानी लाला धर्मदास जी अब इतिहास के पन्नों में

•कृष्ण चन्द आर्य, सम्पादक

लाला धर्मदास जी निर्भीक व्यक्ति थे। वे स्वतन्त्रता सेनानी के अतिरिक्त जिला बिलासपुर कांग्रेस कमेटी के कई वर्षों तक अध्यक्ष रहे। वे एक क्रांतिकारी व्यक्ति थे। महर्षि दयानन्द सरस्वती और उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज पर उनकी अटूट और अनुपम श्रद्धा और प्रेम था। यह स्वर्गीय लाला धर्मदास के ही प्रयास थे कि बिलासपुर अरोड़ा सैक्टर में आर्य समाज की स्थापना हुई। वे बिलासपुर आर्य समाज के संस्थापक थे। मेरा लाला धर्मदास जी से बहुत पुराना परिचय रहा है। लाला जी कई बार सुन्दरनगर हमारे गृह में भी आते रहे। मुझे याद है कि बिलासपुर आर्य समाज के विवाद का समाधान करने हेतु आर्य प्रतिनिधि के प्रदेशाध्यक्ष स्वामी सुमेधानन्द जी ने प्रदेश की कार्यकारिणी की बैठक हमारे गृह में रखी थी। सार्वदेशिक सभा की ओर से श्री विमल विधावन एडवोकेट ने भाग लिया था। उस समय लाला धर्मदास जी भी अपने पुराने दो मित्रों को लेकर पधारे थे। सार्वदेशिक सभा के एडवोकेट श्री विमल विधावन ने सभा द्वारा लाला जी को आर्य समाज बिलासपुर के कार्यभार संचालन करने के निर्णय का स्वागत किया। उस समय मैंने खरीहड़ी में आर्य समाज न होने के कारण अपने घर में ही बैठक करने की विवशता पर प्रकाश डालते हुये प्रार्थना की थी कि मेरे और मेरे अनुज सत्य प्रकाश, अध्यक्ष, दिव्य मानव ज्योति अनाथालय के नाम पर डेढ विश्वा जगह है। यदि आप सभी चाहें और हमें सहारा दें तो हम यहाँ आर्य समाज स्थापित कर सकते हैं। स्वामी सुमेधानन्द जी और लाला धर्मदास जी स्वतन्त्रता सेनानी ने न केवल मेरे प्रस्ताव का समर्थन किया अपितु स्वर्गीय लाला धर्मदास और स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज ने उसी क्षण २१००/– और २५००/– रूपये की राशि अपनी ओर से दान देकर मेरी पीठ थपथपाई। स्वर्गीय लाला धर्मदास जी ने अन्य समाजों से पधारे आर्यजनों से भी इस पुनीत कार्य हेतु आगे बढ़ने की अपील की। वहां देखते ही देखते १६ हजार रूपये की राशि उसी समय एकत्रित हो गई। कार्य प्रारम्भ करने हेतु यह राशि पर्याप्त थी। मैं सोचता था कि १०० की इस रसीद बुक पर उपरोक्त १६ हजार की राशि के अतिरिक्त पाँच–दस हजार की राशि दानियों से ही प्राप्त हो जाऐगी। मेरी हैरानी की सीमा न रही कि जिस रसीद बुक में मैं २५ या २६ हजार की राशि का अनुमान लगा रहा था उसमें ६६ हजार के लगभग राशि एकत्रित हुई। यह पूज्य लाला धर्मदास और स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज की प्रेरणा का परिणाम था कि कुछ ही समय के उपरान्त यहाँ न केवल आर्य समाज का निर्माण हुआ अपितु साप्ताहिक हवन प्रारम्भ हो गये। इस कार्य हेतु स्वर्गीय श्री कृष्ण लाल आर्य पूर्व सभा प्रधान, माननीय पं० केदारनाथ शर्मा पूर्व प्रधानाचार्य, आर्य समाज मण्डी, आर्य समाज कुल्लू, आर्य समाज सोलन और आर्य प्रतिनिधि सभा का सहयोग सराहनीय रहा। बाद में अनेकों विभूतियाँ समाज निर्माण कार्य में सहयोग देने लगीं। इसके लिये वे सब साधुवाद के पात्र हैं। लेकिन मूल प्रेरणा स्त्रोत स्वर्गीय लाला धर्मदास और स्वामी सुमेधानन्द जी ही रहे। इसमें श्रीमती कमला सत्यप्रिया का योगदान भी सराहनीय रहा है। उन्होंने ही खरीहड़ी में आर्य समाज स्थापित करने की प्रेरणा दी थी।

हमारी हार्दिक इच्छा थी कि मैं इस समाज में सभा की बैठक में आर्य समाज खरीहड़ी की ओर से माननीय गोविन्द राम आर्य और श्रद्धेय स्वतन्त्रता सेनानी लाला धर्मदास जी को सम्मानित करूँ। यह अवसर भी हमें प्राप्त हुआ जब आर्य प्रतिनिधि सभा की बैठक इस आर्य समाज में हुई। इस बैठक में सभा और आर्य समाज खरीहड़ी द्वारा माननीय लाला धर्मदास और पूर्व मुख्यमंत्री धूमल के गुरू श्री गोविन्द राम जी को सम्मानित किया। श्री लाला धर्मदास जी और मान्यवर गोविन्द राम जी दोनों पुराने मित्र रहे थे। एक दूसरे को ६० की आयु के बाद भी सकुशल देखकर दोनों मित्रों ने भीगी आँखों से एक दूसरे को गले लगाया और कुशल क्षेम पूछा। लाला धर्मदास जी श्री गोविन्द राम जी से आयु में पाँच साल अधिक थे। यह संयोग की ही बात थी कि मैं लाला धर्मदास जी को उनका चित्र देने उनके गृह गया। लाला जी ऊपरी मंजिल में बैठे थे। मैंने उन्हें चित्र दिया। स्वतन्त्रता सेनानी लाला धर्मदास जी कहने लगे कि मैंने इस बार अपने जन्मदिन पर अपनी बेटियों को पाँच–पाँच सौ रूपये तथा दयानन्द मठ चम्बा को १० हजार रूपये दान दिये। उन्होंने अपनी छोटी पुत्रवधु को मुझे भी ५००/ देने के लिये कहा। मैंने आर्यवन्दना का एक पैकट भी लाला जी को दिया और ५००/– रूपये की रसीद भी काटकर उन्हें दे दी। मैंने उन्हें 'जीवेम शरदः शतम्' कह कर उनकी सौ साल की आयु की प्रार्थना की। इस पर लाला धर्मदास जी तपाक से बोले "आप, ऐसा मत कहो। अब मैं और अधिक जीना नहीं चाहता"। मेरे लिये लाला जी के ये शब्द अटपटे से लगे। मैंने लाला धर्मदास से जाने की अनुमति ली। मुझे कानों में आती बार लाला जी के वे शब्द कि मुझे अब अधिक आयु नहीं चाहिये। मैं सोचने लगा कि आज तक जब भी बात होती थी तो लाला जी यही कहा करते थे कि मैं अभी लम्बी आयु तक जीना चाहता हूँ। भीष्म पितामह की तरह वे बार–बार ऐसा

thearyasamaj.org

ही कहा करते थे कि मैं अभी अधिक जीवन जीना चाहता हूँ, मैं मरना नहीं चाहता। मेरे जीवन में एक सौ से भी अधिक बसन्त ऋतुयें आये। मैं सोचने लगा शायद दो वर्ष पूर्व उनकी पत्नी जो परिवार को छोड़कर चली गई थी उनके वियोग की पीड़ा ने बिलासपुर के इस स्वतन्त्रता सेनानी लाला धर्मदास को उपरोक्त शब्दों को कहने पर बाध्य किया हो। लाला जी ने मुझे यह भी कहा कि मेरे बहुत से बन्धु–बान्धव, मित्रगण इस संसार को छोड़कर चले गये हैं। मैं अधिक जी कर क्या करूँगा ? अब मुझे जाना ही चाहिये। बिलासपुर का यह ६८ वर्षीय भीष्म पितामह २ फरवरी २००६ को इस नश्वर शरीर को त्याग कर सदा और सर्वदा के लिए जुदा हो गया। अब हम उन्हें यादों के झरोखे से ही देख पायेंगे। ऋषिवर दयानन्द के इस शिष्य और महान् स्वतन्त्रता सेनानी को हमारा कोटिशः नमन्।

कवि के यह शब्द लाला धर्मदास की विदाई के समय मेरे मन और मस्तिष्क में बार–बार कौंध रहे थे :

कफन में सजाकर विदा करने वालो,
चिता में जलाकर न आंसू बहाना।
मैं सितारों की दुनियां में जाकर रहूंगा,
न मरघट में जाकर दिये तुम जलाना।।

मैं कौन ?

♦अर्जुन देव स्नातक, ५ सीताराम भवन, फाटक आगरा कैंट, आगरा

रात में एक मधुर स्वप्न देखा। एक बाग में घूमते हुए पहुँचा हूँ। चारों ओर सुन्दर सुन्दर, सुगन्धित पुष्प बाग की शोभा बढ़ा रहे थे। पक्षीगण विभिन्न प्रकार की आवाजों के साथ परस्पर वार्तालाप कर रहे थे। कदम आगे बढ़े, एक कुटिया दीखी, कौतूहल हुआ। वर्तमान में भव्य प्रसादों में रहने–वाले लोगों में यह सामान्य सी कुटिया में कौन है ? जानने की इच्छा से कदम आगे बढ़े, देखा काषाय वस्त्रधारी स्वस्थ सुडौल शरीर वाले महात्मा हैं। उन्होंने हमारी ओर स्नेह भरी दृष्टि से देखा। हमने चरण–स्पर्श किए। सुखद–मधुर स्वर के साथ स्नेह सिक्त आशीर्वाद प्राप्त हुआ। एक अन्य आसन पर बैठने के साथ परिचयात्मक वार्तालाप हुआ। उन्होंने हमसे जो पूछा उसका उत्तर हम न दे सके।

उन्होंने कहा–'कभी ऑपने सोचा है–आप एक शब्द का प्रयोग जीवन भर करते हैं–मैं खाता हूँ, मैं सोता हूँ। मैं दौड़ता हूँ–इसके साथ ही मेरा घर, मेरी पुस्तक, मेरी दुकान, मेरा पुत्र आदि। कभी सोचा है–मैं कौन हूँ, मेरा लक्ष्य क्या है आदि। सत्य तो यह है कभी सोचा नहीं था तो उत्तर न दे सका। इतने में नियत समय पर घड़ी ने आवाज की, उठे तो स्वप्न ने व्याकुल कर दिया– पर सत्य तो है 'मैं कौन हूँ ?' 'मेरा लक्ष्य क्या है ?' इस पर हम कभी विचार ही नहीं करते हैं।

चिन्तन के क्षेत्र में प्रवेश करना कठिन होता है। लेकिन प्रश्न की उलझन ने इस दिशा में बढ़ने को विवश किया। इस पर विचार करने से पूर्व यकायक पूर्व पठित एक बात स्मृति–पटल पर अंकित हो गई– पाश्चात्य प्रसिद्ध लेखक 'कारलायल' ने लिखा है–'पता नहीं लोग क्यों 'मैं' की खोज में समय नष्ट करते हैं। ''मैं कौन हूँ'' इस विचार के झंझट में न पड़कर 'मुझे क्या करना चाहिए' यह सोचकर कार्य में लग जाना चाहिए। मन के अनुसार यह विचार अच्छा लगा। बुद्धि के क्षेत्र में प्रवेश करते ही यह विचार निरर्थक है, यह ज्ञात हुआ। दार्शनिक चिन्तन ने यह सोचने पर बाध्य किया–लोक व्यवहार में सामान्यता मैं पहले यह जानता हूँ कि 'मैं कौन हूँ' तदनुकूल कार्य करते हैं। मैं अध्यापक हूँ, चिकित्सक हूँ, व्यापारी हूँ आदि जानकर ही तदनुकूल उन–उन कार्यों को करता हूँ–इस प्रकार मैं कौन हूँ–इसका ज्ञान प्रथम होना आवश्यक है। चार्वाक दर्शन की मान्यता है–मैं मात्र शरीर हूँ। शरीर की रक्षा उसका सर्वोपरि चिन्तन है। क्योंकि 'भस्मीभूतस्यदेहस्यपुनरागमनं कुतः' चार्वाक के मतानुसार इस संसार में जब तक जीवन है, जब तक इस शरीर की रक्षा करो। कर्ज लेकर घी खाओ। यह देह तो नष्ट हो जाएगा, इसकी दुबारा प्राप्ति नहीं होती। वाल्मीकि ऋषि ने इसे राक्षसी वृत्ति कहा है। रावण सीता से कहता है–''भुङक्ष्व भोगान्यथाकामं पिब भीरू रमस्व'' इच्छानुसार भोग करो अर्थात् खाओ, पीओ और मौज करो। यह विचार शरीर को ही सब कुछ समझने वालों का है। अतः कारलायल का यह विचार कि ''मैं कौन हूँ'' इस पर विचार न करके ''मुझे क्या करना चाहिए'' यह विचार करना उचित नहीं है।

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकला कि प्रथम यह जानना आवश्यक है–मैं कौन हूँ। वैसे यह प्रश्न जितना सरल है, उत्तर उतना ही कठिन। इस चिन्तन के साथ अपने कॉलेज में पहुँचे। वहाँ प्रथम घण्टी में कक्षा १२ के छात्रों को नैतिक शिक्षा पढ़ाते हैं। प्रतिदिन छात्र प्रश्न करते हैं। हम उत्तर देकर यथासंभव उनके ज्ञानवर्धन का कार्य करते थे। इस प्रश्न के अन्तर में जाकर हमने कहा–प्रतिदिन आप प्रश्न पूछते हैं, उत्तर हम देते हैं। आज हम प्रश्न करेंगे, उत्तर आप लोग देंगे।

हमने प्रश्न किया–मैं खाता हूँ, मैं जाता हूँ आदि और मेरी पुस्तक, मेरा घर आदि में यह 'मैं' या 'मेरा' कौन है ? बाल सुलभ ज्ञानवश एक छात्र ने छाती पर हाथ रखकर कहा 'मैं हूँ।' हमने कहा–यह आपने छाती पर हाथ रखा–क्या यह

thearyasamaj.org

छाती 'मैं' हूँ। एक अन्य छात्र ने कहा–मैं बताता हूँ। छात्र ने सामने वाले डेस्क पर पैर रखकर जूते–मौजे उतारे, साथ ही सिर से पगड़ी उतारी–बाल खोल दिये। एक हाथ, पैर के अंगूठे पर और दूसरा बाल के अन्तिम सिरे पर रखकर कहा–यह अंगूठे से लेकर बाल के अंतिम सिरे तक मैं हूँ। सुनकर कक्षा के छात्र हंस रहे थे। हम उसकी चतुराई पर चकित थे।

सत्य तो यही है कि आधुनिक जन मानस भी इस समग्र शरीर को ही 'मैं' कहता है। छात्र की दृष्टि से उत्तर सही था। हमने कहा–यह जो दिखाई देता है–उसकी संज्ञा शरीर है ? क्या मैं शरीर हूँ ? क्या शरीर के अतिरिक्त कोई और 'मैं' है ? अनेक छात्र बोले–इस शरीर के लिए ही हम 'मैं' का प्रयोग करते हैं।

हमने समझाया–एक समय ऐसा भी आता है जब यह शरीर पड़ा रहता है–आंखें हैं, देखती नहीं, कान हैं, सुनते नहीं, इसी प्रकार शरीर की सारी इन्द्रियाँ कार्य नहीं करती हैं। माँ का बड़ा लाड़ला बेटा होता है तो वह भी कहती है, इसे अब ले जाओ–पूछें क्यों ? तो उत्तर होता है–इसमें से 'मैं' कहने वाला निकल गया। प्रश्न है जो निकल गया, वह 'मैं' कौन है ? उसकी संज्ञा क्या है, उसका नाम क्या है ? एक छात्र ने कहा–ये आंख, नाक, कान आदि इन्द्रियाँ ही 'मैं' हैं।

हमने छात्र के इस कथन पर छान्दोग्य उपनिषद् की कहानी सुनाई। सब इन्द्रियाँ शरीर में अपने को श्रेष्ठ समझ रही थीं–उनको लगा मेरे कारण शरीर चलता है–आँख बोली मैं श्रेष्ठ, कान बोले मैं श्रेष्ठ आदि सभी इन्द्रियों अपने को श्रेष्ठ समझ रही थीं। अन्त में प्रजापति ने निर्णय दिया–''यस्मिन् हवै उत्क्रान्ते शरीरं पापिष्ठतरमिव दृश्यते से वै श्रैष्ठः। जिसके निकल जाने पर इन्द्रियों सहित समग्र शरीर व्यर्थ हो जाए, भस्मादि करने योग्य हो वही इस शरीर में श्रेष्ठ। आँख निकल गई अन्धा होकर 'मैं' का प्रयोग करता रहा। ऐसे ही अन्य इन्द्रियों के न रहने पर भी 'मैं' प्रयोग चलता रहता है। अन्त में शरीर में स्थित प्राणतत्व के साथ 'मैं' अर्थात् आत्मतत्व जाने लगा तो सारा शरीर शिथिल होने लगा तब मानो सारी इन्द्रियों ने मिलकर कहा–''भगवन् नेधिः त्वं नः श्रेष्ठोऽसि मा उत्क्रमी'' हे भगवन्! हम समझ गये आप इस शरीर में श्रेष्ठ हैं मत जाइए।

एक छात्र ने कहा–अभी समझ में नहीं आया। इसे और सरलता से समझाइए। हमने कहा काल्पनिक उदाहरण से बात समझाई–कल हमने सर्कस में एक भंयकर शेर देखा। एक छात्र खड़े होकर बोला–आप झूठ बोल रहे हैं, हमारे साथ ही अन्य छात्र भी बोले–इसमें झूठ क्या है–सर्कस का शेर हमने भी देखा है। फिर भी छात्र ने कहा आप झूठ बोल रहे हैं। हमने पूछा–कैसे ? वह बोला देखा आपकी आंख ने, कह रहे हैं आप वाणी से, जिसने देखा वह कहे तो सत्य अर्थात् आंख ने, देखा, वह कहे। छात्र ने क्षण भर के लिए उलझन में डाल दिया, किन्तु हमने तुरन्त कहा–आप भी झूठ बोल रहे हैं, वह कैसे ? हमने कहा कि हमने शेर देखा तो सुना आपके कानों ने, अब आपके कान कहें तो सत्य। छात्र तुरन्त बोला –सुनने वाला, बोलने वाला एक है। हमने कहा इसी अर्थ में उपनिषद् के ऋषि ने उसे अर्थात् आत्मा को इन्द्रियों का स्वामी कहा।

छात्रों को आनन्द आ रहा था ? पूछा–मरने के बाद 'मैं' कहाँ जाता है ? हमने कहा–यह तो निश्चित हो गया कि 'मैं' शरीर नहीं इन्द्रियाँ भी 'मैं' नहीं। फिर हम जिसके लिए 'मैं' का प्रयोग करते हैं उसकी संज्ञा वेदादि ग्रन्थों में आत्मा है। 'आत्मा' शब्द का अर्थ है–'अत सातत्य गमने' है। सातत्य गमन का अर्थ है–निरन्तर गति करने वाला अर्थात् एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में जाने–वाला अर्थात् अविनाशी=जिसका कभी नाश नहीं होता है–वह अविनाशी। इस बात को सुनकर एक शिष्य ने प्रश्न किया–कल नैतिक शिक्षा की घण्टी में आप बता रहे थे वह समग्र संसार नश्वर है–नष्ट होने वाला है–फिर आत्मा अविनाशी=नष्ट न होने वाला क्यों है।

प्रश्न अच्छा था–उत्तर देते समय स्मरण में आया–ईशोपनिषद् या यजुर्वेद में चालीसवें अध्याय के १५ वें मन्त्र में–'वायुरनिलम्' 'आत्मा का विशेषण' 'अनिलम्' दिया है। 'इला' कहते हैं–पृथ्वी को। इससे यह सिद्ध हुआ कि जो पार्थिव=भौतिक पदार्थ है–वे नष्ट होते हैं। यह 'आत्मा' अनिलम है, अभौतिक है। अतः अविनाशी है–शरीर भौतिक है–इसका नाश होता है, आत्मा अभौतिक है अतः इसका नाश नहीं होता है। एक शिष्य ने पूछ लिया–जब आत्मा अविनाशी है तो–मृत्यु के बाद इसकी क्या दशा होती है ? और क्यों होती है ?

यद्यपि प्रश्न पूछने वाले विज्ञान विषय पढ़ने वाले तीव्र बुद्धि वाले छात्र थे–वे शास्त्रीय प्रमाण को न मानकर तर्कपूर्वक कही गयी बात को उत्तम समझते थे। अतः हमने उनसे प्रश्न किया–हमें मनुष्य जन्म मिला, कुछ को पशु–पक्षी आदि का जन्म। इसमें से कोई धनवान् घर में और कोई अत्यन्त निर्धन परिवार में, हममें ही कोई उत्तम, कोई मध्यम और कोई सामान्य बुद्धि वाला क्यों है ? एक को सुख–सुविधा के सम्पूर्ण साधन जन्म से प्राप्त–दूसरे को क्यों नहीं ? आदि संसार की इस विचित्र अवस्था का कारण क्या है ? छात्र स्तब्ध थे। पहली बार उनके सामने जीवन का यह अन्तर, जिस पर

thearyasamaj.org

उन्होंने कभी ध्यान नहीं दिया–'ऐसा क्यों; यह प्रश्न उनके सामने कभी नहीं आया– उन्होंने इस दशा में कभी सोचा नहीं। सोच रहे होंगे कि ऐसा चिन्तन, यह सब सोचने का अवसर तो कभी आता नहीं है–कौन ऐसा सोचता है। सभी सोचते हैं–खाओ, मौज उड़ाओ' यही जीवन है। सभी छात्र मौन अवस्था में तो थे ही, किन्तु गम्भीर चिन्तन में संलग्न। एक छात्र ने उत्तर दिया–ईश्वर की मर्ज़ी जिसको चाहा वैसा बना दिया।

हमने छात्रों से प्रतिप्रश्न किया–आपके पिता न्यायकारी और दयालु हैं। उत्तर मिला–हाँ। हमने कहा–अगर पिता अच्छे बालक को सुविधा न दे, दुष्ट बालक को दे तो–ऐसा पिता कैसा है ? उत्तर मिला–अच्छा नहीं–क्योंकि अच्छे को उत्तम सुविधा देकर उन्नति का अवसर देना उत्तम है, दुष्ट को नहीं। इस सुविधा का आधार क्या होना चाहिए ? आधार उत्तम श्रम। हमने पूछा–ईश्वर न्यायकारी व दयालु है या नहीं ? सबने एक स्वर से उत्तर दिया–'है'।

हमने कहा–आपने स्वयं स्वीकार कर लिया कि ईश्वर सबको कर्मानुसार जन्म सुविधा–असुविधा–बुद्धि–मूर्खता –धन–निर्धन आदि की व्यवस्था करता है। क्योंकि वह न्यायकारी व दयालु है।

एक छात्र ने प्रश्न किया–पूर्व जन्म के कर्मानुसार हमें जो मिला है क्या उसी में हमको निर्भर रहना है ? हमने कहा–देखो मनुष्य योनि में शरीर की दृष्टि से सबको इन्द्रियों आदि की प्राप्ति समान है। भौतिक दृष्टि से साधनों की प्राप्ति में अधिकता–न्यूनता संभव है। किन्तु, कर्मानुसार प्राप्त को लाभ–हानि में लेने में हम पूर्ण स्वतन्त्र हैं। विद्यालय में पढ़े पाठ को आप याद करें या न करें इसमें आप स्वतन्त्र हैं, किन्तु परीक्षा में लिखे हुए अनुसार अंक पाने में आप परतन्त्र हैं। सत्य तो यह कि कर्म करने में हम स्वतन्त्र हैं फल प्राप्ति में परतन्त्र। हम देखते हैं आपकी ही कक्षा में एक बालक निर्धन है भौतिक दृष्टि से सुविधा हीन–फिर वह कक्षा में सदैव प्रथम आता है, क्यों ? क्योंकि प्राप्त असुविधा के लिए न रोकर बहुत परिश्रम करता है। यह कर्म स्वातन्त्र्य ही उसकी उन्नति का कारण है। हम प्राप्त सुविधाओं से उचित लाभ न उठाकर प्राप्त ज्ञान को उपयोग में नहीं लेते हैं। याद रखना है कि भौतिक वस्तुएं सुख–दुख देने वाली हमारे कर्मानुसार होती हैं वैसे भी संसार की कोई वस्तु सुख–दुख देने वाली नहीं है, हम अपनी वासना से उसमें सुख–दुःख प्राप्त करते हैं। ऐसे ही संसार की कोई वस्तु नित्य नहीं है, हम अपनी आसक्ति से उसे नित्य समझते हैं। जो विवेक से, सद्ज्ञान से उत्तम कर्मों में संलग्न रहता है, वह आत्मोन्नति करता है, अपने अगले जन्म को उत्तम बनाता है। संसार का समस्त वैभव प्राप्त कर लें या अन्य भौतिक वस्तुएं प्राप्त कर लें–अन्त समय में आपके साथ कुछ भी नहीं जाता है, हाँ जाता है तो कर्मों का समूह। न जन्म आपके हाथ में है, न मृत्यु। यह जन्म–मृत्यु नियमानुसार अर्थात् कर्मानुसार ईश्वर की व्यवस्था से प्राप्त होती है। कर्मानुसार जन्म–मृत्यु के इस चक्र की संज्ञा आवागमन है।

अतः जीवन को उत्तम बनाने के लिए सत्कर्मों का संग्रह आवश्यक है। सकाम कर्म आवागमन को बन्धन में बांधते हैं निष्काम कर्म अर्थात् फलेच्छा त्यागकर परहित, लोकाहित के लिए कार्य करेंगे, तो मोक्ष=परमानन्द की प्राप्ति होगी।

संक्षेप में :–

१. मैं शरीर नहीं, इन्द्रियाँ नहीं, मैं इनसे पृथक एक तत्व हूँ, जिसकी संज्ञा 'आत्मा' है। 'आत्मा' अभौतिक होने से–'अविनाशी' है।
२. 'आत्मा' कर्म करने में पूर्ण स्वतन्त्र है। वह प्राप्त साधनों का सदुपयोग या दुरुपयोग करने में पूर्ण स्वतन्त्र है।
३. शुभ कर्मों का फल शुभ, अशुभ कर्मों का फल अशुभ प्राप्त करने में ईश्वरीय व्यवस्था से परतन्त्र है।
४. जन्म–मृत्यु अर्थात् आवागमन के चक्र से छूटने के लिए ज्ञानपूर्वक वासना–रहित निष्काम कर्मों से मोक्ष=ब्रह्मानन्द की प्राप्ति होती है।

भारतीय नववर्ष की शुभकामनाएँ

♦रामनिवास गुणग्राहक

मंगलमय सबको सदा, ये भारतीय नववर्ष हो।
भारत में वैदिक संस्कृति का नित्यप्रति उत्कर्ष हो।।
अन्धश्रद्धा से रहित हो धर्म–चिन्तन आज का।
व्यवहार हो परिवार जैसा, भारतीय समाज का।
राजनैतिक पतन रोके, राष्ट्रवादी चेतना।
पीड़ितों के हित हृदय में, सब रखें संवेदना।।
आतंक–नक्सलवाद जैसी क्रूरताएँ दूर हों।
देशद्रोही जनों के सब स्पप्न चकनाचूर हों।।
जातिवादी, क्षेत्रवादी लुप्त हों दुर्भावना।
संकीर्ण स्वार्थों के लिए कोई दे किसी को घाव ना।।
घर–घर रचायें यज्ञ तो, पर्यावरण परिशुद्ध हो।
राष्ट्र के सुविकास का सन्मार्ग ना अवरुद्ध हो।।
वंचित–विकल भी उन्नति के शिखर पर चढ़ता रहे।
विश्व में इस देश का गौरव सदा बढ़ता रहे।।
सब आर्यजन रक्षा करें, ऋषिराज के अभियान की।
व्यवहारमय वाणी ही है आधार जन कल्याण की।।
सिद्धांतजीवी बन जगत् के पथ–प्रदर्शक आर्य हों।
वैदिक मनन, वैदिक वचन, वैदिक हमारे कार्य हों।।
सिरमौर इस संसार का, मेरा ये भारत देश हो।
पूरी करो आर्याभिलाषा आप तो विश्वेश हो।

thearyasamaj.org

'महायज्ञ' दयानन्द मठ घण्डरां

♦विनोद स्वरूप, मुख्य प्रबन्ध सम्पादक

सन्त शिरोमणी स्वामी सर्वानन्द जी महाराज का ११५ वां जन्मोत्सव वार्षिक उत्सव के रूप में दयानन्द मठ घण्डरां जिला कांगड़ा में ११ से १५ मार्च २०१५ तक अपूर्व श्रद्धा, भक्ति भावना और हर्षोल्लास के साथ बड़ी धूमधाम से मनाया गया। पंचदिवसीय उत्सव मठ के अध्यक्ष स्वामी सदानन्द सरस्वती जी की अध्यक्षता में आयोजित हुआ। प्रतिदिन प्रातः ७.३० बजे से १० बजे तक अग्निहोत्र यज्ञ हुआ जिस के ब्रह्मा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से पधारे उपदेशक शास्त्री विजय जी ने यजमानों से वेदमन्त्रों के साथ आहुतियाँ डलवाईं। दयानन्द मठ दीनानगर से पधारे ब्रह्मचारियों ने वेद मन्त्रोच्चारण में शास्त्री जी का सहयोग दिया। सभी स्थानीय और बाहर से पधारे धर्मप्रेमियों ने श्रद्धापूर्वक आहुतियाँ डालकर विश्वशांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना की। हवन समग्री, घृत और प्रसाद की यज्ञ धुनि से वातावरण सुगन्धमय एवं सुरम्य बन जाता था। गत वर्ष की भान्ति इस वर्ष भी मठ से बाहर निकलकर सांयकालीन कार्यक्रम आस–पास के गाँव इंदौरा, मलाडी, सनोर तथा इन्दपुर में आध्यात्मिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। गाँव के लोगों ने इस में बढ़–चढ़ कर भाग लिया। ग्रामीण नर–नारी, बच्चे–बूढ़े बहुत उत्साहित नज़र आए। यह प्रयोग इस वर्ष भी बहुत सफल रहा। गाँववासियों ने सभी धर्मप्रेमियों के लिए प्रसाद और चायेपान की व्यवस्था खुशी–खुशी की। उपदेशकों और भजन मण्डली ने श्रद्धालुओं को सुरीले भजनों और शिक्षाप्रद उपदेशों से बहुत प्रभावित किया। गाँव की महिलाओं और बच्चों ने इन कार्यक्रमों में विशेष रूचि दिखाई। घर द्वारे प्रवाहित होने वाली ज्ञान गंगा में सभी ने गोता लगाया और जीवन धन्य कर पुण्य प्राप्त किया। करनाल हरियाणा के भजनीक जसविन्द्र आर्य जो अपनी भजन मण्डली के साथ उत्सव में पधारे थे, अपने सुमधुर एवं प्रेरणादायक भजन सुनाकर श्रद्धालुओं को धन्य कर दिया :–

जल–थल और नभ में जितने प्राणी हैं सब की आवश्यकताऐं पूरी करने वाले उस प्रभु की रचना का सुन्दर वर्णन करते हुए भजन :–

चारों तरफ जो दिख रहा, ये उसकी फुलवारी है।
रंग–बिरंगे फूल हैं इसमें, खुशबू न्यारी न्यारी है।

मन से विचलित व्यक्ति जब प्रभु के निकट जाता है तो उसका संताप दूर हो जाता है। वेद के पढ़ने और पढ़ाने का सुझाव देकर 'पथिक' का भजन सुनाकर वातावरण को 'वेदमय' बना दिया। मानव और पशु में अन्तर समझाते हुए बताया पशु भूखा रह जायगा किन्तु अभक्ष्य पदार्थ कभी नहीं खायेगा जबकि मानव का कोई सिद्धान्त नहीं। सत्संग का महत्व समझाते हुए 'भोगों का विष न पी ऊँ का अमृत ग्रहण कर।' अन्धे–बहरे और भाग्यहीन मनुष्य सत्संग का आनन्द नहीं उठा सकते। एक समय था जब नारी को नरक का द्वार समझते थे किन्तु देव दयानन्द ने नारी–उत्थान हेतु जो असाधारण कार्य किये उसके कारण नारी जाति ऋषि की ऋणी हो गई है। आज नारी समाज, देश–विदेश में पुरूषों के बराबर अपना योगदान दे रही है। 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता' ये मन्त्र ऋषि ने समाज को दिया है। संस्कृत और संस्कृति की रक्षा करने वाले ऋषि का गुणगान कर भजन गाकर उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की।

माताओं को अपनी सन्तानों के प्रति सावधान करते हुए कहा–बच्चों को संस्कार प्रदान करें। माँ आदि गुरू है अपना दायित्व निभाना न भूले :–

माता बहन मानो कहना
ये देश बचाना है, आर्य बनाना है।

गुणहीन, धनहीन और बलहीन व्यक्ति जो प्रभु का गुणगान नहीं करता, पापी है। जसविन्द्र जी ने बड़े पते की बात बताई :–संसार के मानचित्र से यदि अमेरिका समाप्त हो जाये तो एक धनी देश समाप्त हो जायगा। यदि पाकिस्तान समाप्त हो जाय तो झूठ, फरेब, आतंक दुनियाँ से हट जायगा यदि भारत समाप्त हो जाय तो संसार से ईमानदारी, चरित्र और ज्ञान समाप्त हो जायेगा। वीर शिवा जी, झांसी की रानी, भगत सिंह, विस्मिल और सुभाष चन्द्र बोस की वीरगाथाऐं भजन के माध्यम से सुना कर वीररस का संचार किया। भगत सिंह जब जेल में बंद थे उस समय माँ के साथ संवाद की गाथा सुनाकर सभी श्रोताओं को भावुक कर दिया। महिलाओं को अपने आंसू पौंछते हुए देखा गया।

सरकाघाट से आए भजनोपदेशक वीरीसिंह जी ने भजनों की अमृत वर्षा करते हुए सभी को कृतज्ञ कर दिया। वेदों का महत्व समझाते हुए भजन प्रस्तुत किया। वेद सब रत्नों की खान है, ईश्वर की वाणी है, मानव जीवन का आधार है :–

मिल के गाओ नर–नार महिमा वेदां दी,
कौन करे इंकार महिमा वेदां दी।

हवन यज्ञ को सर्वहिताय सर्वसुखाय बताते हुए :–

वेद पढ़ा जाय, हवन किया जाय,
खुश रहता है उससे विधाता।
प्रेम सीने में जिसके नहीं है,
उन को ईश्वर नज़र नहीं आता।

मन रूपी दर्पण उज्ज्वल कर दिव्य ध्वनि 'ऊँ' का जाप करने से अपूर्व शक्ति प्राप्त होती है।

ऊँ नाम अति मीठा है, कोई गाके देख ले,

thearyasamaj.org

आ जाऐं भगवान, कोई बुला के देख ले।

कस्तुरी मृग इधर–ऊधर भटक कर कस्तुरी ढूंढ़ता फिरता है, मानव भी प्रभु को मंदिर, मस्जिद और गुरूद्वारे में ढूंढ़ने के लिए भटकता फिरता है :–

'नगर–नगर और डगर–डगर में, क्या ढूंढे तू बन्दे' नाते रिश्ते सभी भौतिक जगत के हैं, अपने अनमोल जीवन को कोड़ियों के भाव बर्वाद न कर। दुनियाँ के झमेलों को छोड़कर प्रभु भक्ति की प्रेरणा देते हुए :–

प्रभु भक्ति कीर्तन किया करो
राग द्वेष छोड़ के वन्दे,
अमृत प्याला पिया करो।

प्रभु सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान है, उसके गूढ़ रहस्यों को कोई नहीं जान पाया :–

प्रभु सारी दुनियाँ से ऊँची तेरी तान है,
कितना महान् है तू कितना महान् है।

इस भजन पर सर्वश्रोता तालियाँ बजा बजा इस कर झूमने के लिए विवश हो गये। पांडाल में वातावरण भक्मिय हो गया। आर्य समाज नगरोटा बगवां, नूरपुर और पठानकोट के पदाधिकारी उत्सव में पधारे थे। आर्य प्रतिनिधि सभा हिमाचल के वरिष्ठ उपाध्यक्ष श्री कृष्ण चन्द आर्य की उत्सव में अनुपस्थिति पर परिचितों ने चिन्ता व्यक्त की। रोजड़वन से पधारे उच्चकोटि के विद्वान स्वामी विवेकानन्द जी ने धर्मप्रेमियों को समझाया, मानव जीवन अति मूल्यवान है। हम लोग गौण कार्यों में समय बर्वाद करते हैं। प्रभु ने हमें बुद्धि, भाषा, कर्म करने के लिए दो हाथ, कर्म की स्वतन्त्रता और चारों वेदों का ज्ञान दिया है। इनकी सहायता से मानव मोक्ष प्राप्त कर सकता है। हम सुख तो १०० प्रतिशत चाहते हैं और दुःख ० प्रतिशत मोक्ष में दुःख शून्य प्रतिशत है। उन्होंने अति गूढ़ रहस्य बताया। दुःख, जन्म, प्रवृति, दोष और मिथ्या ज्ञान से मोक्ष प्राप्त हो सकता है। विद्या (ज्ञान) की वृद्धि और अविद्या (अज्ञान) अर्थात् भ्रांतियाँ दूर करें। दुःख राग (आसक्ति) और द्वेष (इर्ष्या) के कारण उत्पन्न होता है। दुःख का तीसरा कोई कारण नहीं है। आर्य प्रतिनिधि सभा हिमाचल के महामन्त्री श्री रामफल सिंह आर्य एवं उनकी अर्धांगिनी श्रीमती रानी आर्या को फूलमालाऐं पहना और शाल भेंट कर सम्मानित किया गया। स्वामी सदानन्द जी ने श्री रामफल की तुलना पं.लेखराम से की। महामन्त्री जी ने बताया कि पं. लेख राम तो महान् त्यागी और तपस्वी आर्य समाजी थे। मैं तो उनके चरणों की धूल के बराबर हूँ। दसुहा में जब धर्मपरिवर्तन की बात पं. जी ने सुनी तो अपने बीमार बेटे को दवा–दारू किये बिना छोड़कर उक्त स्थान पर पहुँचे और अनर्थ होने से रोका। वहीं उन्हें ज्ञात हुआ कि उनका बीमार बेटा भगवान को प्यारा हो गया है। धर्मरक्षा के लिए समर्पित इस महापुरूष का जन्मदिवस हमने ६ मार्च को मनाया।

पं. हरिश्चन्द्र जी ने ऊँ नाम का महत्व समझाते हुए मधुर भजन प्रस्तुत किया। उन्होंने लाख टके की बात बताई :–

नाम खुमारी नानका जो चढ़ी रहे दिन रात, ऐसे मादक पदार्थ का सेवन करो जिसका नशा जीवन भर न उतरे। लोग अपने परिचितों से धन, बंगला, गाड़ी, जमीन के बारे पूछते हैं किन्तु किसी से कभी यह नहीं पूछते कि प्रभु से प्रेम कितना है? पंडित जी ने देव दयानन्द की महिमा का गुणगान किया :–

गुरूवर के वचनों को खूब निभाया था,
विष पी करके अमृत हमें पिलाया था.....

देश में पाखण्ड, आडम्बर, छुआछूत की बीमारी की जड़ें गहराती जा रही थीं। जादू टोने का प्रचार धड़ल्ले से हो रहा था, ऋषि ने इस सब पर अंकुश लगाया। आर्य समाज नूरपुर के प्रधान श्री पी. सी. महाजन से मठ में सम्पर्क हुआ उन्होंने समाजों के संचालन एवं भविष्य पर चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा–हमारे आर्य समाज में केवल १०–१२ वृद्ध ही हवन–यज्ञ में भाग लेते हैं और रख रखाव करते हैं। युवा पीढ़ी का इस ओर कोई रूझान नज़र नहीं आता। हिमाचल के सभी समाजों की लगभग यही स्थिति है। चिन्ता सभी करते हैं किन्तु समाधान कोई नहीं निकाल पाता, आखिर ये बूढ़े कब तक इस नैय्या को खेते रहेंगे। यदि डी. ए. वी. स्कूलों को इसका दायित्व सौंपा जाय तो निकट भविष्य में स्थिति में सुधार हो सकता है। मठ के संचालक स्वामी संतोषानन्द जी ने कर्णप्रिय और शिक्षा प्रद भजन गाकर धर्मप्रेमियों को भाव विभोर कर दिया....

कर्म खोटे तो प्रभु का भजन गाने से क्या होगा,
किया परहेज कुछ भी न तो दवा खाने से क्या होगा।

अन्त में स्वामी जी ने सभी श्रद्धालुओं और उत्सव में सहयोग देने वाले सभी नर–नारियों का धन्यवाद और आभार व्यक्त किया तथा सफल आयोजन के लिए ईश्वर के प्रति कृतज्ञता प्रकट की।

पूर्णाहुति के दिन त्रिकुण्डीय हवन का प्रबन्ध किया गया। स्वामी सदानन्द जी ने बताया कि यज्ञ से पर्यावरण शुद्ध होता है। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य मिलता है। सभी को यज्ञ करने की प्रेरणा प्रदान की। सत्संग में वह रही ज्ञान गंगा में गोता लगाने कर जीवन धन्य करने का उपदेश दिया। अन्त में शांति पाठ के उपरान्त 'ओ३म्' के जयघोष से परिसर गुंजायमान हो उठा। ऋषि लंगर में प्रसाद के रूप में सभी ने स्वादिष्ट भोजन ग्रहण किया। मठ के संचालक स्वामी संतोषानन्द जी एवं प्रबंधक बलविन्द्र शास्त्री की देख–रेख में महायज्ञ सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

thearyasamaj.org

तर्कहीन आस्था, असत्य निष्ठा

♦इन्द्रजित्देव, चूना भट्टियां, सिटी सैंटर के नज़दीक, यमुनानगर (हरियाणा)

द्वारिका पीठ के शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती के २३ जून को दिए इस वक्तव्य पर विवाद उत्पन्न हो गया है कि साई बाबा ईश्वर का अवतार नहीं था तथा 'सनातन धर्म' की मान्यतानुसार उसकी पूजा नहीं होनी चाहिए। उनका यह भी कहना है कि साई बाबा जन्मना मुसलमान था व मांसाहारी भी था इस बयान से रूष्ट हुए साईं बाबा के कुछ भक्तों ने विभिन्न स्थानों पर शंकराचार्य के विरूद्ध प्राथमिकी दर्ज कराई है। कुछ पत्रिकाओं व दैनिक पत्रों में इस विषय में लेख भी प्रकाशित हुए हैं।

दैनिक ''पंजाब केसरी'' चण्डीगढ़ (जालंधर, पालमपुर, हिसार) के २७ जून, २०१४ के सम्पादकीय पृष्ठ पर भाजपा के राज्य सभा सदस्य बलबीर पुञ्ज का एक लेख 'किसी की आस्था को तर्क–कुतर्क से दबाया नहीं जा सकता' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है जिसमें वेद मन्त्रों की गलत व्याख्या देकर 'आस्था' को महिमामण्डित करने का अवाञ्छनीय व असंगत प्रयास किया है। उन्होंने लिखा है कि उपासना के मार्ग अलग भले ही हों किन्तु मंजिल तो एक ही है। यह फूट को बढ़ावा देने की चिरपरिचित बेतुकी मान्यता है। जब भगवान् पृथक–२ मान लिए जाते हैं तो उनके उपासकों की मंजिलें भी यत्र–तत्र होंगी ही। राम की कथित उपासना करने वालों की मंजिल अयोध्या ही होगी क्योंकि उनका उपास्य राम आयोध्या में ही रहता है। कृष्ण को ईश्वर मानकर उनकी उपासना करने वालों की मंजिल मथुरा है। शिव के भक्तों से पूछिए कि तुम्हारा भगवान कहाँ रहता है तो उनका उत्तर होगा–शिव जी का निवास कैलाश पर्वत पर है। तात्पर्य यह हुआ कि उनकी मंजिल कैलाश पर्वत है। इसी प्रकार विष्णु का निवास क्षीर सागर में है तथा उनके भक्तों की मंज़िल क्षीर सागर होगी। ब्रह्मकुमारियों से पूछिए तो वे बताएंगी कि उनका भगवान् गोलोक में वास करता है। ईसाइयों का गॉड चौथे आसमान पर रहता है तो उनका उपास्य जहाँ रहता है अर्थात् चौथे आसमान पर ही उनकी मंज़िल है। मुसलमानों का उपास्य खुदा सातवें आसमान पर रहता है तो सातवें आसमान से इतर उनकी मंज़िल नहीं हो सकती।

पृथक्–पृथक् भगवान् जब मानेंगे तो उपासना के मार्ग व मंज़िलें भी पृथक–पृथक् ही होंगी। बलबीर पुंज अनेक ईश्वरों की सत्ता सिद्ध करने के लिए ऋग्वेद के इस मन्त्रांश का हवाला देते हैं–एकं सद् विप्राः बहुधा वदन्ति। उनका यह प्रयास मंत्र का ठीक अर्थ न समझने मानने के कारण है। मंत्र यह कहता है कि ईश्वर है तो एक ही परन्तु उसके अनेक कर्म व गुण हैं तथा जीवों के साथ अनेक प्रकार के सम्बंध हैं। वह सर्वव्यापक है, इसलिए उसे विष्णु कहा जाता है। वह कल्याणकारी है, अतः उसे शिव नाम से भी पुकारा जाता है। वह गण (समूह) का पति अर्थात् रक्षक है। इस कारण से उसे गणपति भी कहदें तो सत्य की हानि नहीं होगी। परन्तु है तो वह एक ही। कृष्ण का मुख्य नाम कृष्ण है परन्तु उन्हें गीता में कई नामों से अभिहित किया गया है। इनमें से कुछ नाम इस प्रकार हैं–हृषिकेश, वार्ष्णेय, जनार्दन, महात्मन, मधुसूदन अरिसूदन, माधव, वासुदेव, अच्युत, पार्थसारथि व केशव आदि। अर्जुन के भी कई नाम गीता में आए हैं। उनमें से कुछ ये हैं–भारत, कौन्तेय, परंतप, धनंजय पाण्डव, अनघ, कुरुप्रवीर, कुरुनन्दन, कुरूश्रेष्ठ, गुडाकेश, महाबाहो व पार्थ इत्यादि। यदि गीता में अनेक नामों से पुकारे गए कृष्ण एक ही महापुरूष थे तो वेदों में ईश्वर के लिए आए अनेक नामों को एक ही ईश्वर के नाम क्यों नहीं स्वीकारा जाता ? शिव, विष्णु, ब्रह्मा, गणपति, गणेश, सरस्वती, इन्द्र, यम व प्रजापति इत्यादि पृथक्–पृथक् ईश्वर या देवता क्यों खड़े कर लिए गए ? वेदों में नाम भिन्न–भिन्न आए हैं तो एक ही ईश के कार्य भिन्न–भिन्न हैं, इसलिए आए हैं। तर्कहीनों ने ईश्वर के स्वरूप भी अनेक बना लिए हैं। एक का ईश्वर दो हाथ का है, दूसरे का चार हाथ वाला है तो तीसरे का ईश्वर आठ हाथ वाला है। एक का ईश धनुर्धारी है तो दूसरे का बांसुरीवाला है। यह स्वरूप में भिन्नता है। ईश्वर के स्वरूपों में भिन्नता हो गई तो वह ईश्वर एक कहाँ रहा ? 'एकं सद् विप्राः बहुधा वदन्ति' का सही व संगत अर्थ समझा व माना जाता तो यह भिन्नता न होती, अनेकता न होती।

तर्क को हेय व आस्था को ग्राहय व उत्कृष्ट मानने वाले बलबीर पुंज से हमारा निवेदन है कि वेद के मन्त्र के मनचाहे अर्थ करके असत्य को बचाया नहीं जा सकता। सत्य की खोज में तर्क परम सहायक है। सत्य का दूसरा नाम धर्म है। धर्म को जानना तथा तदनुसार आचरण करना ही व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र के लिए हितकर है। महाभारत में व्यास जी ने लिखा है :–

'धर्म एवं हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः' अर्थात् धर्म के मर जाने से मनुष्य की आध्यात्मिक मृत्यु होती है तथा धर्म की रक्षा करने से ही मनुष्य की आध्यात्मिक रक्षा होती है। मनु महाराज के ये शब्द भी स्मरणीय है :

आर्ष धर्मोपदेशं च वेदशास्त्राऽविरोधिना।
यस्तर्केणानुसंधत्ते सः धर्म वेद नेतरः।। मनुस्मृति /१२/१०६

अर्थात् जो मनुष्य वेद और ऋषिविहित धर्मोपदेश अर्थात् धर्मशास्त्र का वेदशास्त्र के अनुकूल तर्क के द्वारा अनुसंधान

thearyasamaj.org

करता है, वही धर्म के तत्व को समझ पाता है, अन्य नहीं। संसार में जब भी उन्नति हुई है, तर्क व ज्ञान द्वारा ही हुई है। यूरोप का इतिहास इस बात की ग्वाही देता है। स्वर्ग के लिए धन लेकर पोप प्रमाण पत्र बेचता था जिसे इण्डलजेन्सेज़ कहा जाता था। जो लोग पाप करते थे, वे पोप से माफ़ीनामा खरीद कर यह समझते थे कि वे पापमुक्त हो गए। मार्टिन लूथर (१४८३–१५८६) ने युक्तियों का एक परिपत्र जारी किया व लोगों को पापों द्वारा आस्था के नाम पर फैलाये पाखण्ड से मुक्ति दिलाई। बाइबिल में लिखा है कि धरती चपटी है व सूर्य धरती के गिर्द घूमता है। सन् १६१० में स्वतन्त्र विचारक गैलिलियों ने इसे चुनौती दी व कहा कि तर्क व विज्ञान के आधार पर सत्य यह है कि पृथिवी घूमती है व गोल है। ब्रूनो (१५४८–१६००) का कहना था कि पृथिवी सूर्य के गिर्द घूमती है। ईसाइयों को बाइबिल के प्रति आस्था थी व उसके अनुसार यह मानते थे कि पृथिवी के गिर्द सूर्य घूमता है, न कि पृथिवी सूर्य के गिर्द घूमती है। इस विचार पर दृढ़ रहे पोपों द्वारा ब्रूनों को कहा गया कि वह अपने विचार बदल ले परन्तु उसने ऐसा नहीं किया तो उसे जीवित जला दिया गया। इंग्लैंड में पादरी लैटीमार को भी सन् १५५५ में ज़िन्दा अग्नि को भेंट कर दिया। गैलिलियों को जेल में डाल दिया गया। हाई पेशिया को बाईबिल का विरोध करने के आरोप में आग में जला दिया गया। एक और देवी जोन आफ़ आर्क के प्रचार को रोकने के लिए उसे जादूगरनी घोषित करके अग्नि में बलात् डालकर भस्मीभूत किया। आज जर्मनी में मार्टिन लूथर की एक भव्य मूर्ति लगी है व वहाँ उसके विचारों को आदर से ग्रहण किया जा रहा है। यूरोप व अमरीका आज वैज्ञानिक व भौतिक दृष्टि से सबसे अधिक उन्नति को प्राप्त कर चुके महाद्वीपों के रूप में सर्वमान्य बन चुके हैं। जब तक ये 'आस्था' अन्धविश्वासों अथवा पाखण्डों के घेरे में रहे तब तक उन्नति का सूर्य वहाँ नहीं चमका था। आज स्थिति बदली हुई है। विज्ञान, सत्य, तर्क व पुरूषार्थ का सुफल मिलता ही है। पूर्वोक्त बलिदानियों के बलिदानों को वही महत्वहीन कहते हैं जिनको तर्क व प्रमाण से एलर्जी है व सत्य सिद्धांत की बात मानना तो दूर, सुनना भी नहीं चाहते। ऐसे लोग 'आस्था' की गुफ़ा में बन्द रहते हैं। बाहर क्या है, इससे उनका कोई मतलब नहीं रहता :–

जो तर्क नहीं करता, वह मूर्ख है, साहसहीन है, दब्बू है।
जो तर्क करता है, वह पुरूषार्थी है, सत्यप्रेमी है ज्ञानी है।
जो तर्क सुनता नहीं, वह स्वार्थी है, दुराग्रही है, अज्ञानी है।
जो तर्क की रक्षा करता है, वह परोपकारी है, साहसी है, दब्बू नहीं।

तर्क से अभिप्राय है–प्रमाणों के अनुसार सत्य का निश्चय करना। जब तक वादी–प्रतिवादी होकर वाद न किया जाए, तब तक सत्यासत्य का निर्णय नहीं हो सकता। इसीलिए लोकोक्ति बनी वादे वादे तत्वबोधः।

आस्था का अर्थ शब्दकोश के अनुसार श्रद्धा है व श्रद्धा=श्रत्+धा अर्थात् सत्य को धारण करना। इस आधार पर राज्य सभा सदस्य बलबीर पुञ्ज से हम पूछते हैं कि :–

पौराणिकों की आस्थानुसार हनुमान बन्दर थे परन्तु उनके द्वारा मान्यताप्राप्त हनुमान चालीसा की यह पंक्ति "हाथ वज्र औ" ध्वजा विराजे कान्धे मूंज जनेऊ साजै" तो कहती है कि हनुमान मूंज का जनेऊ पहनते थे। क्या बन्दर जनेऊ पहनते थे या पहनते हैं ? सीता की खोज में लंका में जाकर वे इधर–उधर घूमते रहे। सीता से भेंट होने से पूर्व एक विचार उनके मन में वानप्रस्थ ग्रहण करने का भी आया था :–

सोऽहं नैव गमिष्यामि किष्किन्धां नगरीमितः।
वानप्रस्था भविष्यामि ह्यदृष्ट्वा जनकात्मजाम्।।

इसके अतिरिक्त हनुमान ने स्वयं को पवन देव का औरस पुत्र स्वीकार किया था–अहं तु हनुमान्नाम मारुतस्यौरसः सुतः वा. रा. सुन्दरकांडम् त्र्यस्त्रिंशः सर्गः हमें आप बताइए कि वानप्रस्थी कौन बनते हैं ? मनुष्य या बन्दर ? क्या बन्दरों के औरस पुत्र होते हैं ? इन एतिहासिक प्रमाणों के आधार पर सत्य यह है कि हनुमान् जी मनुष्य ही थे परन्तु लोगों की 'आस्था' के अनुसार वे बन्दर थे। आप सत्य विरोधी आस्था का खण्डन करेंगे ?

२. अभी कुछ दिन पूर्व एक संन्यासी ने बयान दिया है कि धर्म के ठेकेदार सिद्ध करें कि श्री राम व श्री कृष्ण भगवान् थे। इस पर स्वयंभु केन्द्रीय सनातन धर्म सभा के एक कथित प्रधान ने मांग कर दी है कि इस संन्यासी को गिरफ़्तार किया जाए। यह मांग यही बताती है कि पौराणिकों के पास अपनी मान्यताओं को सही सिद्ध करने को कोई तर्क, प्रमाण व युक्ति उपलब्ध नहीं है तथा सारी मान्यताएं अन्ध विश्वासों पर टिकी हैं जिन्हें वे 'आस्था' का नाम देते हैं। किसी महापुरुष के विषय में जिज्ञासा प्रकट करना संविधान की किस धारा के अधीन अपराध है ? इन्टरनैट पर उपलब्ध जानकारी के अनुसार अफ़गानिस्तान का मिण्डारी बहरुद्दीन नामक एक व्यक्ति अहमदाबाद में आकर एक वेश्या के यहाँ रहा था। वहीं चांद मियां नामक पुत्र जन्मा था जो मांसाहारी रहा। इसी मुसलमान पुत्र को हज़ारों अन्धविश्वासी हिन्दू सत्य साईं बाबा कहते व पूजते हैं। इस कथित भगवान ने देश, धर्म व जाति के लिए कोई त्याग या बलिदान नहीं दिया, न ही देश या समाज की किसी समस्या का समाधान ही किया परन्तु अन्धविश्वासी लोग उसे महापुरुष तो क्या, ईश्वर मानकर उसकी पूजा करते हैं व उसे "ऊँ साई राम" नाम से याद

thearyasamaj.org

करते हैं। शंकराचार्य स्वरूपानन्द ने ये सारे पोल खोलकर देश को जागरूक व सावधान रहने को कहा है तो क्या अपराध किया है ? साईं बाबा के भक्त उनके विरुद्ध मुकद्दमा दायर कर रहे हैं तथा उन्हें धमकियाँ दे रहे हैं। ये लोग तथ्य व सत्य के विरोधी हैं व आरोपों के उत्तर देने की बजाए 'आस्था' की गुफ़ा में बन्द रहना चाहते हैं। इन्हें याद रखना चाहिए कि गुफ़ा में अन्धकार ही अन्धकार है, जिसके रहते ताज़ी वायु व प्रकाश उन्हें नहीं मिल सकता। इस गुफ़ा के बाहर खड़ा सत्य इन्हें बाहर निकलकर प्रकाश व वायु का लाभ लेने की प्रार्थना कर रहा है। तर्क इनकी गुफ़ा का द्वार खटखटा रहे हैं व प्रमाण इन्हें शास्त्रार्थ करने की चुनौती दे रहे हैं। समाजहित इन्हें अनुरोध कर रहा है कि वे अपनी 'आस्था' को राष्ट्र की भावनात्मक एकता व सैद्धांतिक निष्ठा के आगे समर्पित कर दें।

अविस्मरणीय संस्मरण

मैं बिलासपुर में गत् दिनों आर्य समाज के संस्थापक तथा सुप्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी स्वर्गीय लाला धर्मदास जी के सम्बन्धी के अचानक देहावसान होने पर उनके सुपुत्र श्री सुरेन्द्र बब्बल के अनुसार उनका वैदिक रीति से अंतिम संस्कार कराने हेतु गया था। मृतक श्री रमेश का शव एक कमरे में पड़ा था जिसमें उनके बड़े भाई के साथ मैं भी काफी देर तक बैठा रहा। अंत में कमरे से बाहर निकल कर मैंने वहां उपस्थित महिलाओं से कहा कि मैं लम्बे समय तक श्री रमेश के भाई के साथ बैठा रहा और बातें करता रहा लेकिन रमेश जी लेटे ही रहे, उन्होंने एक शब्द भी नहीं कहा। वहां पर उपस्थित सभी सम्बन्धी महिलाएं मेरे इस वाक्य को सुनकर हैरान रह गई। उन्होंने शायद यह समझा कि कहीं पंडित जी का दिमाग अचानक ही तो नहीं फिर गया जो उल्टी–पुल्टी बातें कह रहे हैं। मैंने उन महिलाओं की बात को एक दम भांप लिया और उन्हें कहा कि मेरा दिमागी संन्तुलन बिल्कुल ठीक है और आप सभी का मेरी कही बात पर चुप हो जाने को मैं भांप गया और आप सभी अपनी जगह ठीक हैं कि मृतक ५२ वर्षीय रमेश मेरे साथ कैसे बात करते ? उनकी तो जीवन लीला समाप्त हो गई थी। केवल उनका मृतक शरीर सामने पड़ा था जिसे शास्त्रों में प्रेत की संज्ञा दी गई है। महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुसार जब व्यक्ति शरीर त्यागता है तो उसे प्रेत की संज्ञा दी जाती है और अन्तयेष्ठि संस्कार करने के बाद भूत की संज्ञा दी जाती है। अर्थात अमुक व्यक्ति इस संसार में अब नहीं रहा व भूतकाल में प्रवेश कर गया है। भूत से अभिप्राय भूत–प्रेत से नहीं है जिसे हम प्रायः कहते रहते हैं। आर्य समाज बिलासपुर के संस्थापक स्वतन्त्रता सेनानी लाल धर्मदास जी ६८ वर्ष की आयु में इस संसार से विदा हो गये थे लेकिन वे जनता में अपनी ईमानदारी और समाजसेवा के लिए जाने–माने और पहचाने जाते थे। लाला धर्मदास जी दबंग प्रकृति के व्यक्ति थे। राजाओं के राज में उन्हें जेल की यातनाएं भी झेलनी पड़ी लेकिन भारत माता को स्वतन्त्र कराने के लिए उन्होंने कोई भी कसर नहीं रखी। अंग्रेजों के समय में जेल में बंद करने का मतलब यह समझा जाता था कि न कोई अपील, न कोई दलील, न कोई वकील अर्थात् उन दिनों राजा–महाराजाओं को ही मुख्य न्यायधीश और सर्वे–सर्वा समझा जाता था। लाला धर्मदास जी राजाओं –महाराजों के आदेशों की चिन्ता किये बिना भारत माता की पराधीनता की जंजीरों को काटने के लिए बड़ी से बड़ी यातनाओं को झेलते हुए भी स्वतन्त्रता संग्राम में अग्रसर रहे। यह उन जैसे धीर–वीर और गम्भीर व्यक्तियों की देन थी कि १५ अगस्त १९४७ को देश स्वतन्त्र हुआ और भारत को पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त हुई। आज समस्त देशवासियों को इन समस्त स्वतन्त्रता सेनानियों के बलिदानों पर गर्व है। लाला धर्मदास जी निर्भीक प्रकृति के व्यक्ति थे। वे दयालु, दानी और सज्जन पुरूष थे। एक दिन मैं आर्य वन्दना का पैकेट ले करके उनको देने गया तो वे उपरी मंजिल में बैठे थे। मुझे देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे कि आज मेरा जन्म दिवस है। मेरे बेटों ने धूमधाम से इसे मनाने की बात मुझसे की। जेकिन मैंने सोचा कि अबकि बार मैं अत्यन्त सादगी के साथ अपनी जयन्ती मनाऊंगा और मैंने अपने परिवारजनों को कोई भी धूमधड़ाका करने की मनाही कर दी। मैंने अपनी बेटियों को पांच–पांच सौ रूपये की राशि दी। उन्होंने अपने परिवार को मुझे भी ५०० रूपये देने को कहा जो सम्भवतः उनकी पुत्रवधु ने लाकर तुरन्त मुझे दे दिये। मैंने उस राशि की तुरन्त रसीद काटकर लाला जी को दे दी और प्रभु से उनके १०० साल से अधिक आयु प्राप्त करने की प्रार्थना की। उन्होंने कडकते हुए कहा कि बस–बस ऐसा मत कहो, अब मैं एक दिन भी अधिक नहीं जीना चाहता। अपने आप को लम्बी आयु प्राप्त करने वाली इस महान विभूति ने संभवता अपने जीवन साथी की असमय वियोग से पीड़ित होकर कहे हों। मैंने उनसे आशीर्वाद लेकर घर के लिए प्रस्थान किया। इससे पूर्व लाला धर्मदास जी ने भर पेट सुस्वादु भोजन करवाया। यह मेरे जीवन की लाला जी के साथ बिताये अविस्मरणीय संस्मरण थे।

–कृष्ण चन्द आर्य

thearyasamaj.org

सत्संग का जादू

♦महात्मा आनन्द स्वामी

विश्वामित्र का महर्षि वसिष्ठ से झगड़ा था। विश्वामित्र बहुत विद्वान् थे। बहुत तप उन्होंने किया। पहले महाराजा थे, फिर साधु हो गये। वसिष्ठ सदा उनको राजर्षि कहते थे। विश्वामित्र कहते थे, "मैंने ब्राह्मणों जैसे सभी कर्म किये हैं, मुझे ब्रह्मर्षि कहो।" वसिष्ठ मानते नहीं थे; कहते थे; "तुम्हारे अन्दर क्रोध बहुत है, तुम राजर्षि हो।"

अरे, यह क्रोध बहुत बुरी बला है। सवा करोड़ नहीं, सवा अरब गायत्री का जाप कर लें, एक बार क्रोध इसके सारे फल को नष्ट कर देता है।

विश्वामित्र वास्तव में बहुत क्रोधी थे। क्रोध में उन्होंने सोचा, 'मैं इस वसिष्ठ को मार डालूँगा, फिर मुझे महर्षि की जगह राजर्षि कहने वाला कोई रहेगा नहीं।' ऐसा सोचकर एक छुरा लेकर, वे उस वृक्ष पर जा बैठे जिसके नीचे बैठकर महर्षि वसिष्ठ अपने शिष्यों को पढ़ाते थे। शिष्य आये; वृक्ष के नीचे बैठ गये। वसिष्ठ आये; अपने आसन पर विराजमान हो गये। शाम हो गई। पूर्व के आकाश में पूर्णमासी का चाँद निकल आया। विश्वामित्र सोच रहे थे, 'अभी सब विद्यार्थी चले जाएँगे, अभी वसिष्ठ अकेले रह जायेंगे, अभी मैं नीचे कूदूंगा, एक बार में अपने शत्रु का अन्त कर दूंगा।' तभी एक विद्यार्थी ने नये निकले हुए चाँद की ओर देखकर कहा, "कितना मधुर चाँद है वह! कितनी सुन्दरता है!" वसिष्ठ ने चाँद की ओर देखा; बोले, "यदि तुम ऋषि विश्वामित्र को देखो तो इस चाँद को भूल जाओ।" यह चाँद सुन्दर अवश्य है परन्तु ऋषि विश्वामित्र इससे भी अधिक सुन्दर हैं। यदि उनके अन्दर क्रोध का कलंक न हो तो वे सूर्य की भांति चमक उठें।" विद्यार्थी ने कहा, "महाराज! वे तो आपके शत्रु हैं। स्थान–स्थान पर आपकी निन्दा करते हैं।" वसिष्ठ बोले, "मैं जानता हूँ, मैं यह भी जानता हूँ कि वे मुझसे अधिक विद्वान् हैं, मुझसे अधिक विद्वान् हैं, मुझसे अधिक तप उन्होंने किया है, मुझसे अधिक महान् हैं वे, मेरा माथा उनके चरणों में झूकता है।"

वृक्ष पर बैठे विश्वामित्र इस बात को सुनकर चौंक पड़े। वे बैठे थे इसलिए कि वसिष्ठ को मार डालें और वसिष्ठ थे कि उनकी प्रशंसा करते नहीं थकते थे। एकदम वे नीचे कूद पड़े, छुरे को एक ओर फेंक दिया, वसिष्ठ के चरणों में गिरकर बोले, "मुझे क्षमा करो!"

वसिष्ठ प्यार से उन्हें उठाकर बोले, "उठो ब्रह्मर्षि!" विश्वामित्र ने आश्चर्य से कहा, "ब्रह्मर्षि ? आपने मुझे ब्रह्मर्षि ? परन्तु आप तो यह मानते नहीं हैं ?"

वसिष्ठ बोले, "आज से तुम ब्रह्मर्षि हुए। महापुरुष! तुम्हारे अन्दर जो चाण्डाल था, वह निकल गया।" यह है सत्संग का जादू!

लाहौर में रहते थे एक छज्जू भगत। कई लोगों ने इनका चौबारा देखा होगा। एक दिन वे अपने उस चौबारे में बैठे थे; कुछ और लोग भी उनके साथ थे। नीचे फल बेचने वाला एक आदमी आया। आवाज़ देकर उसने कहा, "अच्छे संगतरे! अच्छे संगतरे भाई, अच्छे!" छज्जू अपने साथियों की ओर देखकर बोले, "सुनते हो यह आदमी क्या कहता है ?" साथियों ने कहा, "संगतरे बेचता है भगत जी!" भगत जी बोले, "तुम समझे नहीं, ध्यान से सुनो! वह कहता है, 'अच्छे संगतरे'–जो अच्छे लोगों का संग करता है वह तर जाता है।" यह है सत्संग की महिमा! मानसिक साधना के लिए यह दूसरी आवश्यक बात है। तीसरी बात है सेवा। परन्तु सेवा का अर्थ क्या है ? तीन प्रकार की शक्ति मनुष्य के पास होती है–बाहु–बल, बुद्धि–बल और धन–बल। इस शक्ति को केवल अपने लिए नहीं अपितु दूसरों की भलाई के लिए भी प्रयोग करना, यह सेवा है। महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज के नियमों में यह बात स्पष्ट रूप में लिखी है; यह भावना कूट–कूटकर भरने का यत्न किया; उन्होंने कहा, "संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।"

आर्य समाज केवल इस देश के लिए नहीं है; सभी देशों के लिए है; किसी एक राष्ट्र के लिए नहीं है; सभी राष्ट्रों के लिए है। आर्य समाज न धर्म है, न सम्प्रदाय। वह एक आन्दोलन है, जिसका उद्देश्य है–मनुष्य को सुखी बनाना; जितनी शक्ति हमारे पास है, उसे दूसरों की भलाई में खर्च कर देना। इसलिए महर्षि ने आर्य समाज के नियमों में लिखा, "प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट नहीं होना चाहिए, अपितु दूसरों की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।"

यह है सेवा की भावना! सेवा से मन बहुत जल्दी शुद्ध होता है; अभिमान मिट जाता है। इससे पाप मिट जाता है। इसलिए जितनी भी शक्ति है, उसके अनुसार अपने जीवन में सेवा करो और कुछ नहीं कर सकते तो अपने मुहल्ले के बच्चों को इक्ट्ठा करके उन्हें पढ़ने में मदद दो। पढ़ा नहीं सकते तो उन्हें दौड़ना सिखाओ, परेड करना सिखाओ। यह भी नहीं कर सकते तो उन्हें सभ्यता से उठना–बैठना, खाना–पीना सिखाओ। यह भी नहीं कर सकते तो आर्य समाज मंदिर में आ जाओ, अपने हाथ से यहाँ झाड़ू दो, लोगों के जूते संभालने की सेवा करो। यह भी न हो सके तो बाज़ार में चले जाओ; जहाँ केले की दुकान है, वहाँ खड़े हो जाओ। लोग दुकान से केले लेते हैं, वहीं छीलकर उसे खाते हैं, छिलके को सड़क पर फेंक देते हैं; तुम इस छिलके को उठाकर एक ओर रख

thearyasamaj.org

दो जहाँ वह किसी के पैर के नीचे न आए, किसी के फिसलने का कारण न बने। साधारण–सी बात लगती है यह, परन्तु केले का छिलका ग़लत स्थान पर पड़ा हो तो कैसा भयानक परिणाम उत्पन्न करता है, यह तो मैंने देखा। रुड़की में एक सज्जन रहते थे। उनकी घरवाली बहुत बीमार थी। घर से शीशी लेकर वे डॉक्टर साहब के पास गये कि जल्दी से दवा लाकर पत्नी को पिलायें। दौड़े हुए चले जाते थे कि रास्ते में केले का एक छिलका पाँव के नीचे आ गया, उस पर से फिसले, सड़क पर जा गिरे। हाथ की शीशी टूट गई, टूटी हुई शीशी गर्दन में लगी, बड़ी नस कट गई, वहीं मर गये। यदि उस छिलके को किसी ने उठा दिया होता तो एक आदमी की जान बच जाती। सेवा छोटी हो या बड़ी, सदा महान् होती है।

आर्य समाज देश के अन्दर बढ़ा तो निश्चित रूप से इसलिए कि उसने सेवा के कार्य को अपनाया। जहाँ–कहीं, जब–कभी, जो–कोई कष्ट हुआ, वहाँ आर्य समाज के कार्यकर्त्ता पहुँच गए। भूचाल आए या बाढ़, अकाल पड़ जाए या बलवा हो जाए, आग लग जाए या पानी फट पड़े, आर्य समाज के सेवक वहाँ पहुँचते। काँगड़े का भूचाल मुझे याद है। मैंने भी वहाँ कार्य किया, मैंने भी टोकरी उठाई। सन् १६०५ में पृथिवी वहाँ पर हिली, पहाड़ हिले, चट्टानें हिलीं, धरती का सीना फट गया, मकान गिरे, यात्री उनमें दब गए, पुजारी उनमें दब गए। आर्य समाज सबसे पहली संस्था थी, जिसने अपने स्वयंसेवकों को वहाँ भेजा। डी.ए.वी. कॉलिज के विद्यार्थी वहाँ गए, झोंपड़ियाँ बनाई। उन्होंने सेवा का कार्य आरम्भ कर दिया। बीकानेर में अकाल पड़ा तो स्वर्गवासी लाला लाजपतराय जी और महात्मा हंसराज जी वहाँ पहुँच गए। गाँव–गाँव में सहायता–केन्द्र खोल दिये। स्थान–स्थान पर कार्य होने लगा। इसी प्रकार हर स्थान पर कार्य हुआ, चाहे कोयटे का भूकम्प हो या मालाबार का हत्याकाण्ड, एबटाबाद का फ़िसाद हो या कोहाट का बलवा। छत्तीसगढ़ उड़ीसा के अन्दर, बिहार के अन्दर, हर जगह, हर बार आर्य समाज इस प्रकार पहुँचा जैसे सेवा ही उसका परम उद्देश्य है। हर जगह पहुँचकर इसने सेवा की। मेरा सौभाग्य था कि मुझे इनमें से प्रत्येक स्थान पर जाने का अवसर मिला। पूज्य महात्मा हंसराज जी ने हर स्थान पर मुझे भेजा। प्रत्येक स्थान पर सेवा करते हुए मैंने देखा कि इस कार्य से कितनी प्रसन्नता होती है! मन कितना निर्मल होता है! बिहार में भूकम्प आया तो मैं कलकत्ता में था। महात्मा हंसराज जी का तार वहाँ पहुँचा कि बिहार पहुँचो, देखो कि सहायता और सेवा का कार्य कैसे करना है। पं. ऋषिराम जी की और सेठ दीपचन्द जी पोछार के परिवार के श्री आनन्दीप्रसाद को साथ लेकर मैं बिहार पहुँचा। मुंगेर के नगर में जाकर देखा कि वहाँ हजारों लोग दब गये हैं। दोपहर के समय भूचाल आया। दुकानें खुली थीं, ग्राहक दुकानों से सामान खरीद रहे थे, भूकम्प ने सबको गिरती दीवारों और छतों के नीचे दबा दिया; दुकानदार भी दब गए, ग्राहक भी। मलबे को हटाने का कार्य आरम्भ हुआ तो पहले दिन काफ़ी लोग जीवित निकले, कुछ घायल, कुछ सिसकते हुए, कुछ ठीक। तीसरे और चौथे दिन भी कुछ लोग जीवित निकले, बाकी केवल लाशें। ज्यों–ज्यों दिन बीतते गए, त्यों–त्यों लाशें मिलने लगीं; परन्तु सोलहवें दिन एक मकान का मलबा उठाया गया तो एक आदमी बिल्कुल अच्छा–भला, बिल्कुल जीवित निकल आया। उसे देखकर हम कुछ आश्चर्य चकित हुए। किस प्रकार ईश्वर–विश्वास हमारे हृदय में झूम के जाग उठा, यह तो हम ही जानते हैं। हमने उससे पूछा कि तू इतने दिन जीवित कैसे रहा ? वह बोला, मैं केले बेचता हूँ। केलों का ढेर अपने पास रक्खे बैठा था कि पृथ्वी हिल उठी। छत का शहतीर मेरे ऊपर आ गिरा, बाकी छत उसके ऊपर आई, इसलिए मुझे चोट नहीं लगी। तभी एक बार पृथ्वी फिर हिली, मेरे ऊपर गिरे मलबे में से एक ओर से हवा आने लगी, पता नहीं किस ओर से, परन्तु उस हवा ने मुझे मरने से बचा दिया। तभी पृथ्वी एक बार फिर हिली, दुकान का फ़र्श टूट गया, उससे पानी उछल पड़ा। इतने दिनों तक मैं उस पानी को पीकर और केले खाकर जीवन व्यतीत करता रहा। कल केले समाप्त हो गए, आज पानी थोड़ा रह गया, मैंने समझा मैं बचूँगा नहीं, परन्तु तभी मलबे के ऊपर कुदालों की आवाज़ आने लगी। आपने मुझे बाहर निकाल लिया।" उस व्यक्ति को देखकर मेरे हृदय ने पुकारकर कहा :

जाको राखे साइयाँ, मार सके ना कोय।
बाल न बांका कर सके, जो जग बैरी होय।।

अपितु ऐसी प्रसंनता इसमें नाच उठी जैसी पहले कभी नहीं हुई थी। यह है सेवा का फल! सेवा से मानसिक बल बढ़ता है। मानसिक साधना पूरी होती है। सेवा मनुष्य को बहुत ऊपर ले जाती है।

परन्तु जो लोग ओ३म् का जाप करना चाहते हैं, उनके लिए केवल शारीरिक और मानसिक साधन तो पर्याप्त नहीं। आत्मिक साधना भी इसके लिए आवश्यक है। आत्मिक साधना का मार्ग है श्रद्धा। आजकल की सभ्यता का सबसे बड़ा पाप यह है कि इसने मनुष्य की श्रद्धा को समाप्त कर दिया है। हर स्थान पर आलोचना, हर बात में दलीलबाजी हर जगह बाल की खाल उतारना, यही हमने सीख लिया है; परन्तु यह कल्याण का मार्ग तो नहीं है, चैन का मार्ग भी नहीं है। श्रद्धा के बिना आत्मा की उन्नति के मार्ग पर एक भी पग नहीं उठाया जा सकता। ऋग्वेद के दशवें मण्डल के १५१ वें सूक्त में आता है :–

श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः।
श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि।।

thearyasamaj.org

पशुबलि पर प्रतिबन्ध (एक उचित निर्णय)

♦सत्यपाल भटनागर, अखाड़ा बाजार, कुल्लू (हि० प्र०)

माननीय उच्च न्यायालय शिमला ने धार्मिक स्थलों तथा आयोजनों पर दी जाने वाली पशुबलि पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया है। बुद्धिजीवियों तथा कई धार्मिक संस्थाओं ने इस प्रतिबन्ध का स्वागत किया। परन्तु पशुबलि के पक्षधरों ने इस देव संस्कृति में हस्ताक्षेप तथा परम्पराओं पर कुठाराघात माना तथा इस निर्णय को एक कड़वा घूंट समझ कर पिया। यह प्रतिबन्ध कोई नई बात नहीं थी। हिमाचल सरकार ने १९७२ में पशु सरंक्षण अधिनियम पास किया है। जिस द्वारा पशुओं के मारने पर प्रतिबन्ध लगाया हुआ है। दोषी होने पर कारावास एवं ₹ २५०००/– के दण्ड का प्रावधान है। बलि प्रथा को धार्मिक देव परम्परा का अंग समझकर इसको दृढ़ता से लागु नहीं किया गया। परन्तु समय–समय पर निरन्तर इसके विरूद्ध आवाजें उठती रहीं। कोई भी सच्चा धर्म हत्या को प्रोत्साहित नहीं करता चाहे यह पालतु पशुओं की क्यों न हो। अहिंसा हमारे धर्म का एक महत्वशाली अंग है। मनु महाराज ने धर्म के दस लक्षण बताये हैं जिन में पहला लक्षण अहिंसा है। अष्टांग योग का पहला अंग यम है। जिसके पाँच उपांग हैं। पहला उपांग अहिंसा है। अहिंसा अपनाये बिना कोई धार्मिक हो ही नहीं सकता। बलि का अर्थ वध करना ही नहीं होता। इसके अन्य अर्थ दण्ड तथा 'अन्न' भी होता है। जैसे मनुस्मृति के इस श्लोक में बलि का अर्थ दण्ड है :–

योरन्वलियमा दते करं शुल्कम् च पार्थिवः।
प्रतिभागं च दण्डम् च सः सद्यानरकं ब्रजते।।

(जो राजा प्रजा की रक्षा किये बिना शुल्क तथा कर राशि दण्ड के रूप में ग्रहण करता है, वह नरक को प्राप्त होता है।)

मनु. ८/३७

मनुस्मृति के ही इस श्लोक में बलि का अर्थ भोजन या अन्न है।

अध्यापन ब्रह्म यज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पनं।
होमो दैवो, बलिर्भैतोस्थिति नृयज्ञोऽतिथि पूजनं।।

अध्यापन ब्रह्म यज्ञ होता है। बड़े बूढ़ों/माता–पिता की सेवा पितृयज्ञ होता है। साधारण यज्ञ देव यज्ञ कहलाता है। जीवों को भोजन खिलाना बलिवैश्वदेव यज्ञ होता है तथा अतिथि सत्कार ही नृ यज्ञ है।

भारत के इतिहास में एक काल ऐसा भी आया जिसमें साधारण जनता की शिक्षा दीक्षा का कोई प्रबन्ध न था। अज्ञानता वश साधारण जनता में अन्ध विश्वास और कुरीतियाँ पनपी धर्म ईश्वर उपासना और भक्ति के स्थान पर कर्म काण्डों पर आधारित हो गया जिसके उन्मूलन के लिये भक्ति आन्दोलन चला। गुरू नानक, कबीर, दादु आदि ने एक ईश्वर की पूजा, जाति–पाति कर्म काण्डों और छुआ छूत से मुक्ति की बात की। इसके बाद सुधारों का चक्र चला जो अभी तक चला आ रहा है। पशु बलि के विरुद्ध समय पर आवाजें उठती रहीं। यह आवाज़ें शिक्षा प्रचार और प्रसार से और भी मुखर हुईं। परिणाम स्वरूप कई स्थानों में पशु बलि बन्द कर दी गई। मिंजर मेला चम्बा में झोटे को रावी नदी में डालना तथा पत्थर मारकर उसे डुबोना बन्द हुआ। यह समाज का निर्णय था। इस प्रकार भीतरी सिराज कुल्लू में बाला सुन्दरी तथा मारकाण्डेय मन्दिरों तथा प्लाईच गांव के लोगों ने बलि प्रथा स्वयं बन्द करने कानिर्णय लिया। देवी धरेच मन्दिर ठियोग उपमण्डल (हिमाचल, शिमला जिला) में भुण्डा के समय १०८ बकरों के स्थान पर १०८ नारियलों का प्रयोग किया जाने लगा। कुछ मंदिरों में नारियल के स्थान पर इलाईची तथा सुपारी का प्रयोग किया जाने लगा। मुण्डन संस्कारों तथा विवाह संस्कारों में देवता के नाम से बलि देकर, सहभोज (धाम) में मांस परोसा जाता था। परन्तु कुछ लोगों ने दृढ़ता से इस प्रथा का विरो ा किया। सामाजिक दण्ड दे दिया परन्तु पशु बलि देना स्वीकार नहीं किया। कई ग्रामों में सामाजिक बहिष्कार भी हुए परन्तु उन्होंने ने यह सहन किया। परन्तु शुभ कार्य में पशु हत्या करना न माना। वही लोग प्रगतिशील कहलाने के अधिकारी होते हैं जो तर्क संगत विचारों को अपनाने के लिये सदा तैयार रहते हैं। हम कपड़ों को तो फैशन के अनुसार बदल लेते हैं परन्तु पुराने विचारों को आसानी से नहीं बदलते। हम सामाजिक परम्पराओं, मान्यताओं, रूढ़ियों एवं रीति रिवाजों को आसानी से छोड़ते नहीं। हम उस यात्री की तरह व्यवहार करते हैं जो रेलगाड़ी में बैठ हुए भी अपने सामान को सिर पर लादे रखता है।

देवता बलि से नहीं अपितु स्तुति, प्रार्थना और उपासना से प्रसन्न होते हैं। शिक्षा के प्रचार और प्रसार से व्यर्थ सामाजिक परम्परायें स्वयं समाप्त हो जाती हैं। जैसे वृक्ष के पत्ते पीले होने पर पतझड़ के समय स्वयं झड़ जाते हैं। शुभ कर्म करने से ही शुभ होगा। हड़िम्बा राक्षसी ने भी असुरी वृति को त्याग देवत्व को प्राप्त किया। १९७२ का पशु सुरक्षा अधिनियम घरेलु पशुओं पर इसलिये लागु नहीं किया गया ताकि इसे धार्मिक मान्यताओं में हस्ताक्षेप न माना जाये। माननीय हाईकोर्ट ने इसे अब घरेलु पशुओं पर भी लागु कर दिया। श्रुति अनुसार सत्युग में भी यज्ञ की सामग्री पर विवाद देवताओं और ऋषियों में हो गया। 'अज' एक शब्द आया। इसके दो अर्थ अन्न तथा बकरी होते हैं। ऋषि इस शब्द का अर्थ अन्न लेते थे और उनके अनुसार यज्ञ अन्न से करना चाहिये परन्तु देवता 'अज' का अर्थ बकरी लेते थे और उन

thearyasamaj.org

के अनुसार यज्ञ में बकरी की बलि देनी चाहिये। परन्तु बाद में ऋषियों का पक्ष मान्य हुआ। क्योंकि अर्थ संदर्भ के अनुसार लगाया जाना चाहिये। जैसे सेंध्वा शब्द के दो अर्थ होते हैं, नमक और घोड़ा यदि भोजन के समय कहें, ''सेंध्वा आनय'' तो इसका अर्थ है नमक लाओ। यदि बाहर जाते कहें तो इसका अर्थ है घोड़ा लाओ। यदि भोजन करते समय लाने वाला घोड़ा लाये और बाहर जाते समय नमक लेकर आये तो स्थिति कितनी हास्यस्पद हो जायेगी। सब प्राणी उस परमेश्वर की पुत्र/पुत्रियाँ हैं और कोई भी पिता उनकी हत्याओं से प्रसन्न नहीं हो सकता। सम्भवतः बलि का आरम्भ तथा प्रचलन ऐसे शब्दों के गलत अर्थ लेने के कारण जारी रहा। अब समय आ गया है कि पशु बलि जैसी कुप्रथा की सदा के लिये बलि चढ़ा दी जाये।

शोक प्रस्ताव

(आर्य प्रतिनिधि सभा हि. प्र.)

♦रामफल सिंह आर्य, महामन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा (हि.प्र.) आर्य प्रतिनिधि सभा (हि. प्र.) के भूतपूर्व प्रधान, उच्चकोटि के कर्मठ कार्यकर्त्ता, श्रेष्ठ विचारक, महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त, विद्वान, वैदिक विचारधारा से ओत प्रोत श्री सत्यप्रकाश मेंहदीरत्ता जी का निधन दिनांक २०.०२.२०१५ को उनके गृह पर पिंजौर में हो गया। दिसम्बर, २०१४ में उनका आप्रेशन हुआ था उसके उपरान्त उनकी स्थिति बिगड़ती चली गई और अन्ततः काल के कराल हाथों ने एक योग्य प्रशासक को हमसे छीन लिया। वे लम्बे समय से आर्य समाज से जुड़े रहे और आर्य प्रतिनिधि सभा हिमाचल प्रदेश की स्थापना में उनका श्रेष्ठ एवं पवित्र योगदान रहा। जहाँ भी सभा को कार्य संचालन में कोई बाधा उपस्थित हुई वहीं पर उनके अनुभव ने मार्ग दर्शन दिया।

उनके निधन से आर्य जगत् की अपूरणीय क्षति हुई है जिसे भविष्य में पूरा किया जाना संभव नहीं है। आर्य प्रतिनिधि सभा के संरक्षक के रूप में उन्होंने सदैव श्रेष्ठ मार्गदर्शन प्रदान किया और कार्य संचालन में एक दीप स्तम्भ का कार्य किया।

आर्य प्रतिनिधि सभा (हि. प्र.) उनके निधन पर गहरा शोक व्यक्त करती है और अपनी श्रद्धाञ्जलि उन्हें अर्पित करती है। ईश्वर से प्रार्थना है कि उनकी आत्मा जो इस समय ईश्वरीय न्याय व्यवस्था में है, वह पुनः श्रेष्ठ लोकों को प्राप्त करे और उनके पारिवारिक जनों को इस दुःख की घड़ी में धैर्य प्रदान करे।

समाचार

आत्म प्रज्ञा आश्रम, बाघिनी, नजदीक डी. ए. वी. नूरपुर, जिला कांगड़ा का वार्षिक उत्सव ११ से १३ अप्रैल २०१५ तक हर्षोल्लास, श्रद्धाभाव और धूमधाम से आयोजित किया जा रहा है। जिसमें उच्चकोटि के विद्वान् ज्ञान गंगा प्रवाहित कर एवं भजनीक अध्यात्मिक भजनों से धर्मप्रेमियों को अपूर्व शिक्षा प्रदान करेंगे। आप सभी सपरिवार और मित्रों सहित पधार कर अपने जीवन को धन्य बनाकर पुण्य प्राप्त करें।

—वेद प्रकाश (संचालक)

पैंशनर्ज कल्याण संघ मिलेगा सी.एम.से

हिमाचल पैंशनर्ज कल्याण संघ खण्ड चच्योट की मासिक बैठक माता शैलपुत्री मंदिर स्यांज के प्रांगण में हुई। बैठक की अध्यक्षता प्रधान रणजीत सिंह ने की। बैठक में जिला प्रधान के. सी. आर्य और लक्ष्मी आर्या ने मुख्यातिथि के रूप में भाग लिया। बैठक में संघ के सभी सदस्यों ने एक मत से निर्णय लिया कि विधानसभा सत्र के दौरान मुख्यमन्त्री वीरभद्र सिंह से मिलकर पैंशनरों की मांगों से अवगत करवाया जाएगा। बैठक को डा. अमरनाथ, गयाहरू राम, चंद्रमणी शर्मा, जय राम, खेम चंद एवं बृज लाल ने संबोधित करते हुए संघ की एकता पर बल दिया। संघ की प्रदेश प्रतिनिधि लक्ष्मी आर्या ने ग्लोबल सोसायटी फॉर हैल्थ द्वारा संघ प्रचार सचिव बृज लाल को सम्मानित करने पर बधाई दी। संघ के जिला प्रधान कृष्ण चंद आर्य ने सभी सदस्यों से आग्रह कि २६ मार्च को डैहर में आयोजित होने वाली बैठक में ज्यादा से ज्यादा संख्या में भाग लें।

साभार

स्वामी संतोषानन्द जी, संचालक, दयानन्द मठ घण्डरां, तह. नूरपुर, जिला कांगड़ा ने ₹२००, श्री मुरारी लाल मलहोत्रा, गांव व डा. क्योलीधार, तह. चच्योट, जिला मण्डी ने ₹२००, श्री बेली राम, गांव बौहट, डा. सुन्दरनगर, जिला मण्डी ने ₹२०० की सहयोग राशि भेंट की। आर्य वन्दना परिवार इनका धन्यवाद व्यक्त करता है।

।।ओ३म्।।

ईश्वर की ही उपासना करनी चाहिए।

ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरुप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करनी चाहिए। जिससे सुख प्राप्त होगा ही, कष्ट आवेंगे ही नहीं।

—स्वामी दयानन्द

thearyasamaj.org

अपने शत्रु के कटु व्यवहार का बदला सद्भावनायुक्त व्यवहार से दें।

♦नीला सूद, सह सम्पादक, वैदिक थोट्स

किसी के अपकार का बदला अपकार से देना या आँख फोड़ने वाले की बदले में आँख फोड़ देना उचित हो सकता है परन्तु इसके हानिकारक प्रभाव भी हो सकते हैं। चाहे आप युद्ध जीत लें परन्तु दिल के एक कोने में आपको कुछ खालीपन का अनुभव होता है और लगता है कि आपकी कोई मूल्यवान वस्तु आपसे दूर हो गई है। महात्मा गांधी के शब्दों में, "आँख के बदले दूसरे की आँख को फोड़ने का परिणाम संसार को अन्धा कर सकता है।" समय बीतने के साथ किसी समय उपलब्धि दिखने वाली यह बात, निराशा व पछतावे में बदल जाती है। ऐसी परिस्थिति में, अपने प्रतिशोध को पूरा करने का दूसरा सुन्दर उपाय भी है और वह है कि हमारा बदला ऐसा हो कि दूसरे का हृदय परिवर्तन कर दे और आपसी वैमनस्य को खत्म कर आपसी सम्बंधों को सुधार दे। ऐसा करने से गलत काम करने वाले के मन में एक नया परिवर्तन होता है। अक्सर ऐसा करने पर विरोध मित्रता का रूप ले लेता है जो कि एक उल्लेखनीय उपलब्धि कही जा सकती है। ऐसा करने से हमारे मित्रों की संख्या में वृद्धि होती है और यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जिसके जितने अधिक मित्र होते हैं वह उतना ही अधिक इस धरती पर स्वयं को सुखी व सन्तुष्ट अनुभव करता है।

जैसा हम जानते हैं बर्लिन की दीवार पूर्वी बर्लिन और पश्चिमी बर्लिन को बांटती थी। कुछ पूर्वी बर्लिन वासियों ने पश्चिमी बर्लिन वासियों के प्रति गहरा द्वेष भाव अपने अन्दर उत्पन्न कर लिया था। इसी द्वेष भाव् के कारण पूर्व बर्लिन वालों ने पश्चिम बर्लिन वासियों का अपमान करने के लिए एक ट्रक में कूड़ा, ईंट के टुकड़े और अन्य अनाप–शनाप व्यर्थ की वस्तुएँ भरकर चोरी छिपे पश्चिमी बर्लिन वासियों को भेजीं। जब पश्चिम बर्लिन वालों को उसका पता लगा, तो वे इससे कुपित हुए और उन्होंने चाहा कि वह भी उसके बदले में वैसा ही व्यवहार करें। पश्चिम बर्लिन वासियों ने पूर्वी बर्लिन वासियों को एक ऐसा उपहार भेजने का निर्णय किया जिससे कि उनके किए गए अपमान का उचित बदला लिया जा सके। उनमें से एक बुद्धिमान व्यक्ति को जब पता लगा तो उसने उनको परामर्श दिया कि उनके भेजे सामान के बदले में उनको भोजन, कपड़े और चिकित्सा का सामान, दुर्लभ वस्तुएं एवं मूल्यवान पदार्थ भेजें। उन्होंने, उस सामान के साथ एक पत्र भी रखा, जिसमें कहा गया था कि हर कोई सामर्थ्य और बुद्धि के अनुसार देता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि पश्चिमी बर्लिन के इस उदारपूर्ण कार्य से दोनों पक्षों में विश्वास का भाव एवं अच्छे सम्बन्ध पैदा हुए।

बुद्धिमान मनुष्य महान् गुणों को जीवन में धारण करते हैं व उनका पालन करते हैं। एक जुनूनी धार्मिक अन्धविश्वासी व्यक्ति समाज सुधारक सन्त स्वामी दयानन्द सरस्वती के अन्धविश्वासों व कुरीतियों के खण्डन एवं सत्य मान्यताओं में मण्डन से चिढ़कर प्रायः हर समय चिल्लाकर–चिल्लाकर उनके लिए अपशब्दों व गालियों का प्रयोग करता था। एक दिन स्वामी जी का एक अनुयायी उनके लिए फलों की एक टोकरी ले कर आया। स्वामी जी ने तुरन्त अपने एक अन्य भक्त को पास बुलाया और उसे टोकरी में से कुछ फल ले जाकर उस गेरुए वेशभूषा वाले व्यक्ति को देने को कहा जो प्रतिदिन उन्हें गालियाँ दिया करता था। उन्होंने उसे यह संदेश भी भेजा कि उसे इन फलों की अधिक आवश्यकता है क्योंकि स्वामी जी के प्रति अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए उसे गालियाँ देने में अपनी भारी ऊर्जा खर्च करनी पड़ती है। स्वामी जी का भक्त स्वामी जी की यह बात सुनकर हतप्रभ रह गया पर स्वामी जी की इच्छानुसार उसने उस व्यक्ति के पास जाकर उसको फल देकर स्वामी जी का संदेश भी दे दिया। वह व्यक्ति स्वामी जी के उस व्यवहार से चकित रह गया और स्वयं को लज्जित अनुभव करते हुए उनके पास क्षमा माँगने जा पहुँचा। उसका हृदय परिवर्तन हो गया और वह उनका अनुगामी भक्त बन गया। इस घटना से यह सिद्ध होता है कि उदारता व दान आदि गुणों को धारण करने से शत्रु को मित्र में बदला जा सकता है। यह प्रतिशोध के पवित्र तरीके को अपनाने से मिलने वाली शक्ति है।

प्रतिशोध की भावना से अन्धे होकर आँख के बदले आँख लेने की जगह इस प्रकार के प्रेम युक्त मधुर व्यवहार को अपनाकर आज के युग में शत्रुता के रवैये को मित्रता में बदला जा सकता है खास कर जबकि आज द्वेष भावना व इससे उत्पन्न हिंसा ने सबमें परस्पर डर पैदा किया हुआ है। यह स्थिति मानवता के लिए शर्मनाक है।

आर्य वन्दना शुल्क : वार्षिक शुल्क : ₹100, द्विवार्षिक शुल्क : ₹ 160, त्रैवार्षिक शुल्क : ₹ 200
आप शुल्क हि. प्र. स्टेट को–आपरेटिव बैंक लिमिटेड, सुन्दरनगर शाखा (खाता संख्या : 32510115356 आर्य वन्दना) में भी जमा करवा सकते हैं।

thearyasamaj.org

Arya Vandana/Sml/L33/Sm/64/2000 Postal Registered No. : MANDI (HP)/21/2013-15
Valid upto 31-12-2015

बुक पोस्ट

सेवा में

680. श्री विनय आर्य, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा, 15 हनुमान रोड, नई दिल्ली 110001

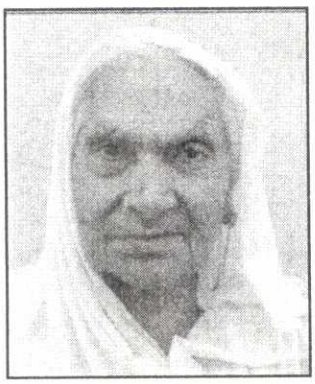

लाला धर्मदास जी की भाभी श्रीमती निर्मला देवी

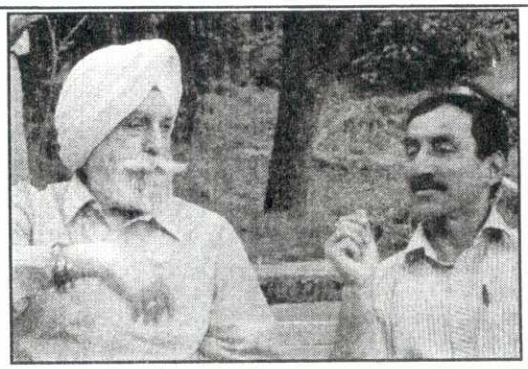

सुपर कॉप पदमश्री के. पी. एस. गिल, अध्यक्ष भारतीय हाकी महासंघ से वार्ता करते हुए भारतीय हाकी महासंघ के संयुक्त सचिव व हि. प्र. हाकी संघ के महासचिव व आर्य समाज के प्रधान सुरेन्द्रपाल दास।

जलियाँवाला बाग और वीर ऊधम सिंह

♦पं. नन्दलाल निर्भय, जनपद पलवल (हरियाणा)

रहती है जिस देश में, देशवासियो फूट,
होती है उस देश की, बुरी तरह से लूट।
बुरी तरह से लूट, नित्य झगड़े होते हैं,
दुखिया, दीन, अनाथ, वहाँ निशदिन रोते हैं।
घोर नर्क की खान, देश वह बन जाता है,
सुख के दर्शन वहाँ, न कोई कर पाता है।
आपस की ही फूट से, भारत रहा गुलाम,
भारतीयों को ना मिला, किंचित् भी आराम।
किंचित भी आराम विदेशी थे तब शासक,
भारत्तीयों को दुष्ट एवं करते थे नाहक।
आजादी की माँग, भारती यदि करते थे,
ऋषियों के सुत–सुता, सैंकड़ों नित मरते थे।
अमृतसर पंजाब में, जलियाँ वाला बाग,
जिसे याद करके लगी, मम हृदय में आग।
मम हृदय में आग जुल्म डायर ने ढाए,
बालक, वृद्ध, जवान, हजारों जन मरवाए।
वैशाखी का महापर्व था जुल्म किया था,
जगत् पिता जगदीश, दुष्ट ने भुला दिया था।
नन्हें–नन्हें बालकों, का भी किया न ख्याल,
डायर हत्यारा बड़ा था पापी चांडाल।
था पापी चांडाल, त्याग दी थी मानवता,
हुआ स्वार्थ में लिप्त, धार ली थी दानवता।
ऊधम सिंह ने दुष्ट, खास लंदन में मारा,
मिटा दिया शैतान, जानता है जग सारा।
अमर रहेगा विश्व में ऊधम सिंह का नाम,
नव युवको! नव युवत्तियो! करो धर्म के काम।
करो धर्म के काम, काम जगती को आओ,
बनो वीर बलवान, अमर जग में हो जाओ।
कायर मानव मृत, सुनो! माना जाता है,
वीर साहसी मनुष्य, मान जग में पाता है।
भारत में अब हो गया, उग्रवाद का जोर,
आतंकवादी देश में, पाप रहे कर घोर।
पाप रहे कर घोर, जवानो! जोश दिखाओ,
अंगड़ाई ले उठो, जगत् में धूम मचाओ।
विस्मिल, शेखर, भगतसिंह बन जाओ प्यारो,
ऊधम सिंह से वीर बनो, दुष्टों को मारो।